ग्रं १] सस्ती-साहित्य-माला [पुस्तक २

दिव्य जीवन

अंग्रेज़ी के सुप्रसिद्ध लेखक स्विट् मार्सडन के

"The Miracles of Right Thoughts"

का हिन्दी अनुवाद

अनुवादक

सुखसंपत्तिराय भण्डारी

प्रकाशक

सस्ता-साहित्य-प्रकाशक मंडल

अजमेर

चौथी बार] १९२६. [मूल्य ।-)

लागत मूल्य पर हिन्दी पुस्तकें प्रकाशित करनेवाली
एक मात्र सार्वजनिक संस्था

सस्ता-साहित्य-प्रकाशक मंडल, अजमेर

उद्देश्य—हिंदी साहित्य संसार में उच्च और शुद्ध साहित्य के प्रचार के उद्देश्य से इस मण्डल का जन्म हुआ है। विविध विषयों पर सर्वसाधारण और शिक्षित-समुदाय, स्त्री और बालक सबके लिए उपयोगी, अच्छी और सस्ती पुस्तकें इस मण्डल के द्वारा प्रकाशित होंगी।

विषय—धर्म (रामायण, महाभारत, दर्शन, वेदान्तादि) राजनीति, विज्ञान, कलाकौशल, शिल्प, स्वास्थ्य, समाजशास्त्र, इतिहास, शिक्षाप्रद उपयान्स, नाटक, जीवनचरित्र, स्त्रियोपयोगी और बालोपयोगी आदि विषयों की पुस्तकें तथा स्वामी रामतीर्थ, विवेकानन्द, टाल्सटाय, तुलसी दास, सूरदास, कबीर, विहारी, भूषण आदि की रचनाएँ प्रकाशित होंगी।

इस मण्डल के सदुद्देश्य, महत्व और भविष्य का अन्दाज पाठकों को होने के लिए हम सिर्फ उसके संस्थापकों के नाम यहाँ दे देते हैं—

मंडल के संस्थापक—(१) सेठ जमनालालजी बजाज, वर्धा (२) सेठ घनश्यामदासजी बिडला कलकत्ता (सभापति) (३) स्वामी आनन्दानंदजी (४) बाबू महावीर प्रसादजी पोद्दार (५) डा० अम्बालालजी दधीच (६) पं० हरिभाऊ उपाध्याय (७) जीतमल लूणिया, अजमेर (मन्त्री)

पुस्तकों का मूल्य—लगभत लागतमात्र रहेगा। अर्थात् बाजार में जिन पुस्तकों का मूल्य व्यापाराना ढंग से १) रखा जाता है उनका मूल्य हमारे यहाँ केवल ।≈) या ।≡) रहेगा। इस तरह से हमारे यहाँ १) में ५०० से ६०० पृष्ठ तक की पुस्तकें तो अवश्य ही दी जावेंगी। सचित्र पुस्तकों में खर्च अधिक होने से मूल्य अधिक रहेगा। यह मूल्य स्थाई ग्राहकों के लिए है। सर्व साधारण के लिये थोड़ा सा मूल्य अधिक रहेगा।

हिन्दी प्रेमियों का स्पष्ट कर्तव्य

यदि आप चाहते हैं कि हिंदी का—यह 'सस्ता मंडल' फले फूले तो आपका कर्तव्य है कि आजही न केवल आपही इसके ग्राहक बनें पर अपने परिचित मित्रों को भी बनाकर इसकी सहायता करें।

हमारे यहाँ से निकलनेवाली दो मालाएं और
स्थाई ग्राहक होने के दो नियम

(१) हमारे यहाँ से **'सस्ती विविध पुस्तक-माला'** नामक माल निकलती है जिसमें वर्ष भर में ३२०० पृष्ठों की कोई अठारह बीस पुस्तकें निकलती हैं और वार्षिक मूल्य पोस्ट खर्च सहित केवल ८) है अर्थात् छः रुपिया ३२०० पृष्ठो का मूल्य और २) डाकखर्च। इस विवि पुस्तक माला के दो विभाग हैं । एक **'सस्ती-साहित्य-माला'** और दूसरी-**'सस्ती-प्रकीर्ण पुस्तकमाला'**। दो विभाग इसलिये कर दिये गये हैं कि जो सज्जन वर्ष भर में आठ रुपया खर्च न कर सकें वे एक ही माला में ग्राहक बन जावें। प्रत्येक माला में १६०० पृष्ठों की पुस्तकें निकलती हैं और पोस्ट खर्च सहित ४) वार्षिक मूल्य है। माला से ज्यों ज्यों पुस्तकें निकलती जावेंगी, वैसे वैसे एक एक क- वार्षिक ग्राहकों के पास मंडल अपना पोस्टेज लगाकर पहुँचाता जायगा। जब १६०० या ३२०० पृष्ठों की पुस्तक ग्राहकों के पास पहुँच जावेंगी तब उनका वार्षिक मल्य समाप्त हो जायगा।

(२) **वार्षिक ग्राहकों** को उस वर्ष की जिस वर्ष में वे ग्राहक बनें सब पुस्तकें लेनी होती हैं। यदि उन्होंने उस वर्ष की कुछ पुस्तकें पहले से ले रखी हों तो अगले वर्ष की ग्राहक-श्रेणी के दाम दे देने पर पिछले वर्षों की पुस्तकें जो वे चाहे एक एक कापी लागत मूल्य पर ले सकते हैं।

(३) **दूसरा नियम**—प्रत्येक माला की आठ आना प्रवेश फीस या दोनों मालाओं की १) प्रवेश फीस देकर भी आप ग्राहक बन सकते हैं। इस तरह जैसे जैसे पुस्तकें निकलती जावेंगी उनका लागत मूल्य और पोष्ट खर्च जोड़ कर वी. पी. से भेज दी जाया करेंगी। प्रत्येक वी.पी में =) रजिस्ट्री खर्च व =) वी. पी खर्च तथा पोस्टेज खर्च अलग लगता है। इस तरह वर्ष भर में प्रवेश फीसवाले ग्राहकों को क़रीब **ढाई रुपया पोस्टेज** पड़ जाता है। **वार्षिक ग्राहकों को केवल १) ही पोस्ट खर्च लगता है।**

(४) दोनों तरह के ग्राहकों को एक एक कापी ही लागत मूल्य पर मिलती है। अधिक मंगाने पर नियमानुसार कमीशन काटकर भेजी जाती हैं।

हमारी सलाह है कि आप वार्षिक ग्राहक ही बने

क्योंकि इससे आपको पोस्ट खर्च में भी किफ़ायत रहेगी और प्रवेश फीस के ॥) या १) भी आपसे नहीं लिया जायगा।

सस्ती-साहित्य-माला की पुस्तकें (प्रथम वर्ष)

दक्षिण अफ्रिका का सत्याग्रह—प्रथम भाग (ले०—महात्मा गांधी)

(१) पृष्ठ सं० २७२, मूल्य स्थायी ग्राहकों से ।~) सर्वसाधारण से ॥)

म० गांधीजी लिखते हैं—"बहुत समय से मैं सोच रहा था कि स सत्याग्रह-संग्राम का इतिहास लिखूं क्योंकि इसका कितना ही अंश ं ही लिख सकता हूँ। कौनसी बात किस हेतु से की गई है, यह तो द्ध का संचालक ही जान सकता है। सत्याग्रह के सिद्धांत का सच्चा ज्ञान लोगों में हो इसलिये यह पुस्तक लिखी गई है"। सरस्वती. कर्मवीर, प्रताप आदि पत्रों ने इस पुस्तक के दिव्य विचारों की प्रशंसा की है।

(२) शिवाजी की योग्यता—(ले० गोपाल दामोदर तामस्कर एम० ए०, एल० टी०) पृष्ठ-संख्या १२२, मूल्य स्थायी ग्राहकों से केवल ।) सर्वसाधारण से ।=) प्रत्येक इतिहास प्रेमी को इसे पढ़ना चाहिए।

(३) दिव्य जीवन—अर्थात् उत्तम विचारों का जीवन पर प्रभाव। संसार प्रसिद्ध स्विट् मार्सडन के The Miracles of Right Thoughts का हिंदी अनुवाद। पृष्ठ संख्या १३६, मूल्य स्थायी ग्राहकों से ।) सर्व साधारण से ।=) चौथी वार छपी है।

(४) भारत के स्त्री-रत्न—(पाँच भाग) इस ग्रंथ में वैदिक काल से लगाकर आजतक की प्रायः सब धर्मों की आदर्श, पातिव्रत्य परायण, विद्वान और भक्त कोई ५०० स्त्रियों का जीवन-वृत्तान्त होगा। हिंदी में इतना बड़ा ग्रन्थ आज तक नहीं निकला। प्रथम भाग पृष्ठ ४०२ मूल्य स्थायी ग्राहकों से केवल ॥।) सर्वसाधारण से १=) आगे के भाग शीघ्र छपेंगे।

(५) व्यावहारिक सभ्यता—यह पुस्तक बालक, युवा, पुरुष, स्त्री सबही को उपयोगी है, परस्पर बड़ों व छोटों के प्रति तथा संसार में किस प्रकार व्यवहार करना चाहिए, ऐसे ही अनेक उपयोगी उपदेश भरे हुए हैं। पृष्ठ १०८, मूल्य स्थायी ग्राहकों से ≡) सर्वसाधारण से ।)॥

(६) आत्मोपदेश—(यूनान के प्रसिद्ध तत्वज्ञानी महात्मा एपिक्टेटस के विचार) पृष्ठ ११६, मूल्य स्थायी ग्राहकों से ≡)॥ सर्वसाधारण से ।-)

पता—सस्ता-साहित्य मंडल, अजमेर (पीछे देखिये)

आदर्श पुस्तक-भंडार

हमारे यहाँ दूसरे प्रकाशकों की उत्तम, उपयोगी और चुनी हुई हिन्दी
तकें भी मिलती हैं। गन्दे और चरित्र-नाशक उपन्यास नाटक
ादि पुस्तकें हम नहीं बेचते। हिन्दी पुस्तकें मँगाने की जब आपको
रूरत हो तो इस मण्डल के नाम ही आर्डर भेजने के लिये हम आपसे
नुरोध करते हैं। क्योंकि बाहरी पुस्तकें भेजने में यदि हमें व्यवस्था का
र्च निकाल कर कुछ भी बचत रही तो वह मण्डल की पुस्तकें और भी
स्ती करने में लगाई जायगी।

पता—सस्ता साहित्य-प्रकाशक मण्डल, अजमेर

लागत का ब्योरा

कागज़	१३८)
छपाई	१५२)
जिल्द बँधाई	२७)
लिखाई व्यवस्था, विज्ञापन आदि खर्च	१७२)
कुल	४८९)

प्रतियाँ २०००

एक प्रति का मूल्य ।)

विषय-सूची

दिव्य जीवन

दिव्य विचारों का जीवन पर प्रभाव

हमारे हृदय में जो आशापूर्ण तरङ्गें उठा करती हैं, हमारी आत्मा में जिन महत्वाकांक्षाओं का जन्म होता रहता है, हमारे मन में जिन दिव्य भावनाओं का उदय होता रहता है, क्या वे सब शश-शृंगवत् असत्य हैं—बेजड़ हैं-व्यर्थ हैं-फिजूल हैं। नहीं नहीं, वे जीवनप्रद हैं, सत्य हैं, मजबूत जड़वाली हैं, बड़ी प्रबल हैं, प्रभावोत्पादक हैं, हमारी शक्यताओं की सूचक और हमारे उद्देश्य की उच्चता की मापक है, हमारी कार्य्य-सम्पादन शक्ति के परिमाण की द्योतक है।

जिसकी हम चाह करते हैं—जिसकी सिद्धि के लिये हम अंतःकरणपूर्वक अभिलाषा करते हैं, उसकी हमें अवश्य ही प्राप्ति होगी। जो आदर्श हमने सच्चे अंतःकरण से बनाया है-मन, वचन और काया को एक करके जिस आदर्श की सृष्टि की है—वह अवश्यमेव हमारे सामने सत्य के रूप में प्रकट होगा।

जब हम किसी पदार्थ की अभिलाषा करते हैं—जब हम मन, वचन और काया से उसकी प्राप्ति के लिये प्रयत्नवान

होने का मनसूबा बाँधते हैं—उसी समय से हम उस पदार्थ के साथ अपना सम्बन्ध जोड़ना शुरू करते हैं। हमारा अन्तःकरण उसकी सिद्धि के लिये जितना उत्सुक होगा—जितनी हमारी आत्मिक भावनाएँ सुदृढ़ होंगी-उतना ही उसके साथ हमारा सम्बन्ध दृढ़ होगा। शोक! शोक!! और महा शोक!!! कि जीवन के स्थूल बाजू पर तो हम अपना विशेष आधार रखते हैं, पर जीवनादर्श की ओर हम यथोचित ध्यान ही नहीं देते। यही कारण है कि हमें जैसी चाहिये वैसी सफलता नहीं मिलती—पूर्ण विजय से अपने अन्तःकरण को गद्गद नहीं कर सकते—फतह के डंके बजाकर संसार को आश्चर्य्य में नहीं डाल सकते। पर जब हम मन, वचन और काया से उस आदर्श पर स्थित रहना सीखेंगे, जो हमारा ध्येय है—जिसे हम सत्य के रूप में प्रकट करना चाहते हैं—तब हमें अवश्य ही सफलता प्राप्त होगी। यदि हम चाहते हैं कि हम नवयुवा बने रहें—नवयौवन का पुरजोश खून हमारे शरीर में बहता रहे—बुढ़ापे की झुर्रियों से हमारा देह जीर्णशीर्ण न हो तो हमें चाहिये कि हम सदा अपने मन को यौवन के सुखद विचारों के आनंद-समुद्र में लहरें खिलाते रहें। यदि हम चाहते है कि हम सदा सुंदर बने रहे, हमारे मुखमण्डल पर सौन्दर्य का दिव्य प्रकाश झलका करे, तो हमें चाहिये कि सदा हम अपनी आत्मा को सौन्दर्य के मीठे सरोवर में सुख स्नान कराते रहें।

आत्मा में रमण करने का—आदर्श पर कायम रहने का—क्या यह कुछ कम फायदा है कि इससे शारीरिक, मानसिक और नैतिक अपूर्णतायें नष्ट हो जाती हैं। ऐसी दशा में—ऐसी पूर्ण स्थिति में हो नहीं सकता कि कभी हम बुढ़ापे को देखे,

क्योंकि बुढ़ापा अपूर्णता और जरा का ही तो परिणाम है और आदर्श से तो ये बलाएँ कोसों दूर रहती हैं।

आदर्श में—मनोरथ सृष्टि में—हर पदार्थ तरोताजा और सुन्दर रहता है। क्षय और कुरूपता के लिये वहाँ जगह है ही नहीं। आदर्श पर स्थित रहने की आदत से हमें बड़ी ही सहायता मिलती है, क्योंकि वह हमारे सामने पूर्णता का साक्षात् नमूना रखता है, हमारी श्रद्धा को दृढ़ करता है। क्योंकि हम अपनी मनोरथ-सृष्टि में सत्य के उस आभास को देखते रहते हैं, जिसके विषय में हमें मालूम होता रहता है कि सत्य कभी न कभी अवश्य हमें प्राप्त होगा।

जिस पुरुष के सदृश आप होने की अभिलाषा रखते हैं, सदा उसका आदर्श अपने सामने रक्खें। आप अपना यह आदर्श बना लें कि हममें पूर्णता और कार्य्य संपादन-शक्ति बड़ी विलक्षणता से भरी हुई है। आप अपने मन से रोग एवं न्यूनता के विचारों को निकाल दें। आप अपने मन के द्वारों में कभी भी निर्बलता, न्यूनता और अविजय के विचारों का प्रवेश होने न दें। आप तो उक्त आदर्श को पूर्ण करने का मन, वचन और काया से प्रयत्न करें, अवश्य ही आपको यह प्रयत्न सफलता प्राप्त करने में सहायता देगा।

अहा! आशाजनक विचारों में क्या ही विलक्षण शक्ति भरी हुई है? प्रिय पाठको! ज़रा इसका अनुभव तो कीजिए। आप यह विचार पक्का कर लीजिये कि हमारी अभिलाषाएँ पूर्ण होंगी—हमारे मनोरथ सिद्ध होंगे—हमारे सुख-स्वप्न सच्चे होंगे हमें विजय—सफलता प्राप्त होगी। अविजय, असफलता, हमारे पास फटकने तक न पावेंगे। हमारे लिये जो कुछ होगा अच्छा ही होगा, बुरा कभी न होगा और फिर देखिये कि इस तरह

के दिव्य और आशामय विचारों का आपकी शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक एवं सांसारिक उन्नति पर क्या ही दिव्य प्रभाव होता है। मैं ज़ोर देकर कहता हूँ कि इन विचारों को आदत में परिणत कर देने से मनुष्य की जैसी उन्नति होती है, वैसी दूसरी किसी भी बात से नहीं।

तुम अपने अन्तःकरण में इस विश्वास की जड़ जमा दो कि जिस कार्य्य के लिये सृष्टिकर्त्ता परमात्मा ने हमें बनाया है हम उस कार्य्य को अवश्य पूर्ण करेंगे। इसके विषय मे अपने अन्तःकरण में तिल मात्र भी सन्देह को जगह मत दो। यदि यह संशय तुम्हारे मन के द्वारों में प्रवेश करना चाहे तो तुम उसे निकाल बाहर करो। तुम हमेशा उन्हीं विचारों को अपने मनोमन्दिर में आने दो जो हितकर हैं। तुम उसी पदार्थ को आदर्श बनाओ, जिस की सिद्धि तुम चाहते हो। उन विचारों को अपने अन्तःकरण से निकाल दो जो तुम्हें अहितकर मालूम होते हों—उन भावों को देश-निकाला दे दो जो तुम्हें निराश करते हों—निराशा के समुद्र में डुबोते हों। मैं कहूँगा, कि तुम उस पदार्थ मात्र को अपने पास फटकने मत दो जो असफलता और दुःख की सूचना करता है।

आप चाहें जो काम करें, आप चाहे जो होना चाहें पर हमेशा उनके सम्बन्ध में आशापूर्ण, शुभसूचक भाव रक्खें। ऐसा करने से आपको अपनी कार्य्यकर-शक्ति बढ़ती हुई मालूम होगी और साथ साथ यह भी मालूम होगा कि हमारा सुधार हो रहा है। जहाँ आपने अपने मनोमन्दिर में आनन्दप्रद, सौभाग्यशाली और शुभ चित्रों को देखने की अपनी आदत बना ली कि फिर इसके विरुद्ध परिणामोंवाली आदत बनाना आपके लिये कठिन हो जायगा। यदि हमारे बच्चे उक्त प्रकार की शुभ आदत को बनाने

लग जावें, तो मैं निश्चयपूर्वक कहता हूँ कि हमारी सभ्यता में बड़ा ही विलक्षण परिवर्तन हो जायगा-हमारे जीवन की इयत्ता में अपूर्व वृद्धि होगी। जहाँ हमने अपने मन को इस तरह सुसंस्कृत कर लिया कि हमें वह शक्ति प्राप्त होगी, जिससे हम अनैक्यता और उन सहस्त्र शत्रुओं पर पूरी पूरी विजय प्राप्त कर सकेंगे जो हमारी शान्ति को, सुख को, शक्ति को-सफलता को-लूटनेवाले हैं।

सफलता के लिये दिव्य पूँजी

क्या आप संसार व्यवहार में प्रवेश करने के लिये पूँजी चाहते हैं? मैं कहता हूँ कि आप संसार-प्रवेश करने के पहले मन, वचन और काया से इतना सोच लें कि हमारा भविष्य प्रकाशमान होगा, हम उन्नतिशील और सुखी होंगे, हमें सफलता और विजय प्राप्त होगी, एवं सब प्रकार की आनन्दजनक सामग्री हमें प्राप्त होगी। बस सब से पहले इसी दिव्य पूंजी को लेकर संसार में प्रवेश कीजिये और फिर उसके मीठे फल चखिये।

बहुत से मनुष्य अपनी इच्छाओं को-अपनी आशामय तरङ्गों को—जाज्वल्यमान रखने के बदले उन्हें कमज़ोर कर डालते हैं। वे इस बात को नहीं जानते कि हमारी अभिलाषाओं की सिद्धि के लिये जितना ही हम दृढ भाव, अविचल निश्चय रक्खेंगे उतना ही हम उनको सिद्धि कर सकेंगे। वे इस बात को नहीं जानते कि अपनी आशाओं को जीवित रखने का सतत प्रयत्न करते रहने से हम उन्हें प्रत्यक्ष करने की शक्ति प्राप्त कर सकते हैं।

कोई बात नहीं है कि इनकी सिद्धि का समय बहुत दूर मालूम होता हो–यह हमें असङ्गत दीखती हों–तथा इनका मार्ग हमें अन्धकाराच्छन्न दीख रहा हो; पर यदि हम मन, वचन और काया से उनको प्रत्यक्ष करने के लिये जुट जावेंगे, तो धीरे धीरे अवश्य ही हम उनकी सिद्धि कर सकेंगे। पर यहाँ हम यह कहना न भूलेंगे कि केवल हम अभिलाषा ही करते रहेंगे और उसकी सिद्धि के अर्थ कुछ भी प्रयत्न–परिश्रम–न करेंगे तो जल-तरंग की तरह उनका उत्थान और पतन मन का मन ही में हो जायगा।

अभिलाषा तब ही फलोत्पादक होती है, जब वह दृढ़ निश्चय में परिणित कर दी जाती है। अभिलाषा का दृढ निश्चय के साथ सम्मेलन होने से उत्पादक शक्ति का प्रादुर्भाव होता है। फल की प्राप्ति तभी होती है जब अभिलाषा और दृढ़ निश्चय दोनों जुटकर काम करें।

हम हमेशा अपने विचारों के, मनोभावों के, और आदर्श के गुण प्रकृति के अनुसार अपनी कार्य्योत्पादक शक्ति को बढाते घटाते रहते हैं। यदि हम हमेशा पूर्णता का आदर्श अपने सामने रक्खें, यदि हम हमेशा समझते रहें कि सर्व-शक्तिमान परमात्मा के अंश होने से हम पूर्ण हैं, तो हमें वह स्वास्थ्यकर शक्ति प्राप्त होगी जो हमारी रोग सम्बन्धी भावनाओं को एकदम कमज़ोर कर देगी।

बुरे विचारों से जीवन का नाश

तुम उसी बात को सोचो, उसी बात को अपनी ज़बान से निकालो जिसे तुम चाहते हो कि वह सत्य हो। बहुत से

मनुष्य कहा करते हैं कि—"भाई! अब हम थक गये। बेकाम हो गये। अब परमात्मा हमें संभाल ले तो अच्छा हो।" वे इस रोने को रोते रहते हैं कि हम बड़े अभागे हैं—कमनसीब हैं—हमारा भाग्य फूट गया है-दैव हमारे विरुद्ध है, हम दीन हैं—गरीब हैं। हमने सिरतोड़ परिश्रम किया, उन्नत होना चाहा, पर भाग्य ने हमें सहायता न दी। पर वे बेचारे इस बात को नहीं जानते कि इस तरह के अन्धकारमय, निराशाजनक विचार रखने से—इस तरह का रोना रोने से—हम अपने हाथ अपने भाग्य को फोड़ते हैं, उन्नतिरूपी कौमुदी को काले बादलों से ढँक देते हैं। वे यह नहीं जानते कि इस तरह के कुविचार हमारी शान्ति, सुख और विजय के घोर शत्रु हैं। वे यह बात भूले हुए हैं कि इस तरह के विचारों को मन से देश-निकाला देने ही में मङ्गल है। इसी से इन विचारों को आत्मा में बैठाकर ये अपने हाथ अपने पैरों पर कुठाराघात कर रहे हैं। कभी एक क्षण के लिये भी अपने मन में इस विचार को स्थान मत दो कि हम बीमार हैं—कमज़ोर हैं (हाँ यदि आप बीमारी का तथा कमज़ोरी का अनुभव करना चाहें तो भले ही ऐसे विचारों को अपने मन में स्थान दीजिये।) क्योंकि इस तरह का विचार शरीर पर इनके आक्रमण होने में सहायता देता है। हम सब अपने विचारों ही के फल हैं। उच्चता, महानता और पवित्रता के विचारों से हमें आत्म-विश्वास प्राप्त होता है—ऊँची उठाने वाली शक्ति मिलती है और ऊँचे दर्जे का साहस प्राप्त होता है।

यदि आप किसी खास विषय में अपनी अपूर्वता प्रकट करना चाहते हैं तो आप अपने अभिलषित विषय में उच्च आदर्श को लिए हुए प्रविष्ट हो जाइए और तब तक आप अपने

अन्तःकरण को वहाँ से तिलमात्र भी मत हटाइए, जब तक आपको यह न मालूम हो जाय कि सफलता होने में अब कुछ भी सन्देह नहीं है।

प्रत्येक जीव अपने आदर्श का अनुकरण करता है, आदर्श के रंग से वह रँगा जाता है—आदर्श के अनुसार उसका चरित्र बन जाता है। यदि आप किसी मनुष्य के आदर्श को जानना चाहते हों तो उसके चरित्र को—स्वभाव को—देखिए, उसके आदर्श का आपको फौरन पता लग जायगा।

हमारे आदर्श ही हमारे चरित्र के सङ्गठन-कर्ता हैं, और उन्हींमें वह प्रभाव है जो जीवन को वास्तविक जीवन में परिणत करता है। देखो! क्या ही आश्चर्य है कि जैसे हमारे आदर्श होते हैं, जैसे हमारी मानसिक अभिलाषाएँ होती हैं, जैसे हमारे हार्दिक भाव होते हैं, ठीक उन्ही की झलक हमारे मुखमण्डल पर दिखाई देने लगती है। हो नहीं सकता कि इनका भाव हमारे चेहरे पर न झलके—इनका प्रतिबिम्ब हमारी आंखों में न दीखे। अतएव हमें अपने आदर्श को-अपने मनोभाव को—अपने विचार-प्रवाह को श्रेष्ठता और दिव्यता की ओर झुका हुआ रखना चाहिए। हमें पूर्ण निश्चय और पूर्ण विश्वास कर लेना चाहिए कि निकृष्टता, दीनता, निर्बलता, आधिव्याधि, दरिद्रता और अज्ञान से हमारा कोई सरोकार नहीं। हमें इस बात का दृढ़ विश्वास होना चाहिये कि हमारे हाथ से हमेशा उत्तम ही कार्य्य होगा कभी बुरा न होगा।

अहा! वह कौन सी दैवी वस्तु है—दिव्य पदार्थ है—जो हमारी आत्मा को वास्तव में ऊँचा उठाता है—उसे अध्यात्म के आनन्द के उच्च प्रदेश पर पहुँचाता है। प्यारे आत्म बन्धुओ! वह प्रभाव है जो हमारे दिव्य आदर्श से उत्पन्न होता है—

यह वह ज्योति है—जो निर्मल अंतःकरण से निकल कर हमारे जीवन को प्रकाशित करती है।

हमें अपने जीवनोद्देश को सफल करने में श्रद्धा से—आस्था से—भी बड़ी सहायता मिलती है। यदि हम यह कहें कि मनोवांछित पदार्थ का मूल श्रद्धा ही हो सकता है तो कुछ अतिशयोक्ति न होगी। यदि हम यह कहें कि श्रद्धा—आस्था ही हमारे आदर्श की वाह्य रेखा है, तो कुछ भी अनुचित न होगा। पर हमें श्रद्धा ही तक न ठहर जाना चाहिये। श्रद्धा के परे भी कोई पदार्थ अवश्य है? विचार कर गहरी दृष्टि डालने से मालूम होगा कि श्रद्धा, आशा, हार्दिक लालसा आदि मनोवृत्तियों के पीछे एक अलौकिक, दिव्य पदार्थ—सत्य—भरा हुआ है। यह वह सत्य है जो हमारी प्रकृत अभिलाषाओं को सुखरूप प्रदान करता है।

उत्पादक शक्ति का यह एक नियम है कि जिसका हम दृढ़तापूर्वक विश्वास करते हैं, वह हमें अवश्य प्राप्त होता है। यदि आप इस बात का पक्का विश्वास करें कि हमें आलीशान मकान रहने को मिलेगा, हम समृद्धिशाली होंगे, हम प्रभावशाली पुरुष होंगे, समाज में हम वज़नदार गिने जावेंगे—अपना प्रयत्न आरम्भ करेंगे तो आप में एक प्रकार की विलक्षण उत्पादक शक्ति का उदय होगा और वह आपके मनोरथों पर सफलता का प्रकाश डालेगी।

यदि आप अपने जीवनोद्देश को सफल करना चाहते हैं, यदि आप अपने आदर्श को कार्य्य में परिणत करना चाहते है तो आप अपने सम्पूर्ण विचार-प्रवाह को अपने उद्देश की ओर लगा दीजिये। एक ही उद्देश की ओर अपने मन, वचन और काया को लगा देने से संसार में बड़ी बड़ी सफलताएँ होती हुई दीख

पड़ती हैं। आप उन पदार्थों की आशा कीजिये जो दिव्य हों, आप यह आत्म विश्वास कर लीजिये कि हमारे प्रयत्न उत्साह-पूर्वक होने से हमें कोई उच्च, दिव्य और महान् पदार्थ प्राप्त होनेवाला है और हम अपने जीवनोद्देश पर पहुँच रहे हैं। आप इस विचार में मस्त हो जाइए कि हमारी शाश्वत उन्नति हो रही है, और हमारी आत्मा का एक एक परमाणु दिव्यता की ओर जा रहा है।

अभिलाषा और सफलता

बहुत से मनुष्य कहा करते हैं कि इस तरह के स्वप्नों में डूब जाने से—कल्पना ही कल्पना में रहने से—हम वास्तव में कुछ भी काम न कर सकेंगे। केवल हम मन ही के लड्डू खाया करेंगे। पर यह उनकी भूल है। हमारे कहने का यह आशय नहीं है कि आप हमेशा कल्पना स्रोत ही में घूमा करें, विचार ही विचार में रह जावे, केवल मन ही के लड्डू खाया करे। किन्तु हमारे कहने का आशय यह है कि किसी काम को करने के पहले उस काम को करने की दृढ़ इच्छा मन में कर ले और सारी विचार-शक्तियों को उस ओर झुका दें जिससे आपको बहुत ही अधिक सफलता प्राप्त हो। मन के विचार को मन ही में लय न करके उसको दृश्य रूप में रखना अत्यन्त आवश्यक है, यह हम पहले भी कह चुके हैं। पर हम इतना अब भी अवश्य कहेंगे कि ये शक्तियाँ बड़ी ही कार्य सम्पादिकाएँ हैं—पवित्र है—ईश्वर ने दैवी उद्देश सिद्धि के लिये हमे ये शक्तियाँ दी है, जिससे कि हम सत्य की झलक देख सके। इन्ही की बदौलत हम उस समय भी अपने आदर्श पर कायम रह सकते हैं, जब कि हम असुविधा-जनक और बुरी परिस्थिति में कार्य करने को बाध्य किये गये हों।

हवाई किले बनाना निःसार नहीं है। हम पहले अपने मन में उन्हें बनाते हैं—अभिलाषा में उन्हें चित्रित करते हैं—और फिर बाहर उनकी नींव रखते हैं। कारीगर मकान बनाने के पहले उसके नक़शे को अपने मन में स्थिर कर लेता है और फिर उसी के अनुसार उस मकान को बनाता है। सुन्दर और भव्य मकान बनाने के पहले वह अपने मानसिक क्षेत्र में उसकी सुन्दर और भव्य इमारत खड़ी कर देख लेता है।

इसी तरह जो कुछ हम कार्य्य करते हैं, पहले उसकी सृष्टि हमारे मन में होती है, और फिर वह दृश्य रूप में आता है। हमारी कल्पनाएँ हमारी जीवनरूपी इमारत के मानचित्र हैं। पर यदि हम उन कल्पनाओं को सत्य करने के लिये जी जान से प्रयत्न न करेंगे तो उनका मानचित्र मात्र ही रह जायगा। जैसे यदि कारीगर मकान का केवल नकशा ही बनावे और उसे सत्य रूप में प्रकट न करे अर्थात् उसके अनुसार मकान न बनावे तो उसकी स्कीम उस नकशे ही में पूरी हो जायगी।

सब बड़े आदमी जिन्होंने महत्ता प्राप्त की है—बड़े बड़े पदार्थों की प्राप्ति की है—वे सब पहले उन सब अभिलषित पदार्थों के स्वप्न ही देखा करते थे। जितनी स्पष्टता से, जितने आग्रह से, जितने उत्साह से, उन्होंने अपने सुख स्वप्न की—आदर्श की, सिद्धि में प्रयत्न किया उतनी ही उन्हें उनकी सिद्धि प्राप्त हुई।

तुम अपने आदर्श को इसलिये मत छोड़ दो कि उसका प्रत्यक्ष रूप से सिद्ध होना तुम्हें न दीखता हो। तुम अपनी सारी शक्तियों का प्रवाह अपने आदर्श पर लगाकर उस पर मज़बूती से जमे रहो। तुम उसे हमेशा प्रकाशित रक्खो। कभी उसे अन्धकारमय तथा मन्द मत होने दो। हमेशा तुम आनन्द-प्रद नव अभिलाषाजनित वायुमण्डल में रहो। वे ही पुस्तकें

पढ़ो जो तुम्हारी अभिलाषा को प्रोत्साहन देती रहें; उन्हीं पुरुषों के पास उठो बैठो जिन्होंने वह काम किया है जिसकी तुम कोशिश कर रहे हो और जो सफलता के रहस्य को प्रत्यक्ष करना चाह रहे हों।

रात को सोने से पहले आप कुछ देर के लिये शान्तिपूर्वक बैठकर एकचित्त हो अपने आदर्श का विचार करो—विचार-सृष्टि में उसकी मूर्त्ति देखो और आनन्द में मग्न हो जाओ। तुम अपनी मनोकल्पना से स्वप्न में भी मत डरो क्योंकि वह मनुष्य उन्नति नहीं कर सकता—उसका पतन हो जाता है—जो अपने आदर्श के सुखमय स्वप्न नहीं देखता। स्वप्न की शक्ति तुम्हें इस वास्ते नहीं दी गई है कि वह तुममें डर पैदा करे। उसके पीछे सत्य रहा हुआ है यह एक दैवी देन है, जो दैवी खज़ाने से दैवी धन देती है और साधारण पुरुषों की श्रेणी से उठाकर असाधारण पुरुषों की श्रेणी में रखती है—बुरी दशा से निकालकर दिव्य आदर्श पर ला बैठाती है।

हम अपने हृदय के आनन्दमय भवन में आदर्श के जिस आभास को देखा करते हैं वह हमें असफलता और आशा-भङ्ग से हत धैर्य्य होने से रोकता है।

यहाँ स्वप्नों से मेरा मतलब उन स्वप्नों से नहीं है जो केवल तरंगवत् और क्षणिक हैं, पर हमारा मतलब उस सच्ची और प्रकृत अभिलाषा, एवं उस पवित्र आत्मिक आकांक्षा से है जो हमें हमेशा इस बात का स्मरण कराती रहती है कि हम अपने जीवन को दिव्य और महान् बनावें। जो हमें इस बात की सूचना करती है कि तुम अप्रासंगिक एवं बुरी परिस्थिति से उठकर उन आदर्शों को प्रत्यक्ष कर सकते हो, जिन्हें तुम अपने कल्पना राज्य में देखा करते थे।

हमारी प्रकृत अभिलाषाओं के पीछे ऐश्वर्य्य—ईश्वरत्व रहा हुआ है।

दैवी और फलप्रद अभिलाषाओं के लिये हम यह नहीं कहते कि आप अपनी इन अभिलाषाओं का उन पदार्थों के लिये उपयोग करें जिनको आप चाहते हैं, पर वास्तव में जिनकी आपको आवश्यकता नहीं। मैं उन अभिलाषाओं का ज़िक्र नहीं करता, जो मरु सागर के उस फल के सदृश हैं जो दीखने में सुंदर है, पर मुँह पर लाते ही जिसकी जघन्यता प्रकट होती है; पर हमारा आशय आत्मा की उन प्रकृत अभिलाषाओं से है जो हमारे आदर्श की सिद्धि में सहायक होती हैं। मेरा आशय उन असली आकांक्षाओं से है जो हमें पूर्णता पर पहुँचाने में—आत्म-विकाश करने में मददगार होती हैं।

हमारी मानसिक वृत्तियाँ—हमारी हार्दिक अभिलाषाएँ हमारी नित्य की प्रार्थनायें हैं। इन प्रार्थनाओं को प्रकृति देवी सुनती है और उनका यथोचित उत्तर देती है। वह इस बात को मान लेती है कि हम वही पदार्थ चाहते हैं जिसकी सूचना हमारी अन्तरात्मा करती है और वह हमें सहायता करने लगती है। लोग इस बात को बहुत कम जानते हैं कि हमारी अभिलाषाएँ ही हमारी नित्य की प्रार्थनाएँ हैं। ये प्रार्थनाएँ नकली नहीं—बनावटी नहीं—पर शुद्ध हृदय से निकली हुई आत्मिक हैं और परमात्मा उनका सुफल हमें अवश्य देता है।

हम सब इस बात को जानते हैं कि एक दैवी उपदेशक हमारी आत्मा में बैठा हुआ है और वह समय समय पर हमारी रक्षा करता है तथा हमें ठीक राह बताता रहता है, और हमारे हर प्रश्न का उत्तर देता रहता है। जो मनुष्य अपने मानसिक भाव को ठीक करके उत्साह और प्रमाणिकता से

अपने उद्देश पर पहुँचना चाहता है, वह उस पर जरूर पहुँ-चेगा, शायद पूरा न पहुँचे तो उसके क़रीब क़रीब तो जरूर ही पहुँच जायगा।

हमारी हार्दिक अभिलाषाएँ हमारे उत्पादक अन्तर्बल को उत्तेजित करती हैं। वे हमारी शक्तियों को ज़ोर देती रहती हैं—हमारी योग्यता को बढ़ाती हैं। प्रकृति देवी की ऐसी दुकान है कि वहाँ एक कीमत वाली जाती है, और मनुष्य वह कीमत देकर हर चीज को खरीद सकता है। हमारे विचार उन जड़ों से हैं जो शक्तिरूपी अनन्त सागर में फैली हुई हैं और जिनको गति और स्पन्दन देने से वे हमारी आकांक्षा एवं अभिलाषा का स्नेहाकर्षण कर लेती हैं।

वनस्पति संसार की प्रत्येक वस्तु, क्या फल क्या फूल, अपने नियत समय ही पर फलते फूलते और पकते हैं। जाडा वहां तक वृक्षों के पल्लवों पर हमला नहीं करता, जहां तक उन्हें पूरी तरह खिलने का अवसर न मिला हो। फल वर्फ़ पड़ने के पहले वृक्ष पर से गिरने को तैयार रहते हैं. यही कारण है कि बाढ़ रुकती नही।

पर यदि हम देखे कि जाडा आने पर भी सब फल हरे भरे हैं—फूल पल्लवों में हैं और विकसित होने के बदले वे ठंड के शिकार बन गये हैं तो हमें समझ लेना चाहिये कि उनमें कहीं तो भी किसी तरह की भूल हुई होगी।

इसी तरह जब हम देखते हैं कि करोड़ों मनुष्यों में कोई विरले ही ऐसे होते हैं जो अपनी पूर्ण अवस्था तक पहुँचते और बहुत से मनुष्य अर्द्धविकसित होने के पहले ही काल की खुराक बन जाते हैं, तो हमें मानना होगा कि यहाँ भी कुछ भूल अवश्य हुई है।

क्यों हमारा जीवन-वृक्ष अपने समय से पहले ही मुर्झा जाता है? हममें ईश्वर सदृश गुण और अनन्त शक्ति की योग्यता होने पर भी क्यों हमारा जीवन फल अर्द्ध-विकसित होने के पहले ही वृक्ष से गिर जाता है इससे तो हमे मानना होगा कि इसमें कहीं न कहीं हमारी भूल अवश्य है।

जब हम अन्य जीवधारियों से मानव जीवन की तुलना करते तो हमे मालूम होता है कि मानव जीवन के लिये पूर्णतया फलने फूलने और आत्म-विकास करने का ठीक अवसर है। यदि हम अपने दिव्य स्वप्नों का अनुकरण करते जावेंगे तो हमारी अभिलाषाओं के फूलने फूलने का—हमारी आकांक्षाओं के सिद्ध होने का-हमारे आदर्श के पकने का समय ज़रूर आयगा। क्योंकि ये बन्द मुकुर में रही हुई उन पँखुरियों के समान हैं जो कभी कहीं समय पाने पर खिलेंगी और अपनी खुशबू और सुन्दरता से अपने वायुमण्डल को सुगधमय बना देंगी। किसी तरह का क्षय इनकी बढ़ती को न रोक सकेगा।

हम यह बात देखते हैं कि हर मनुष्य में कुछ ऐसी सामग्री मौजूद है जो उसे पूर्ण और आदर्श मनुष्य बना सकती है। यदि हम अपने आदर्श को मज़बूती से पकड़ ले, मन, वचन और काया से सांसारिक कष्टों से न घबराकर अपने जीवनोद्देश के पीछे चलें तो अवश्य ही हममें मानवी शक्तियों का आविर्भाव होकर हमारी सफलता पर प्रकाश पड़ेगा।

ईश्वर की यह आज्ञा कि पूर्ण बनो जैसा कि मैं हूँ, कुछ निःसार नहीं है। उसके सदृश विकाश करने की हममें भी शक्ति है, यह बात अक्षरशः सत्य है।

सुख और सफलता

पतित अवस्था में रहना पाप है

मनुष्य यदि व्याधि, दरिद्रता और दुर्दैव ही का विचार करता रहे तो उसे ये प्राप्त होंगे और उसे ऐसा मालूम होने लगेगा कि मानों ये मेरे ही पास में पड़े हैं फिर भी वह उनसे गहरा सम्बन्ध न करना चाहेगा—वह अपने उत्पन्न किये हुए इन पुत्रों से घबराता रहेगा और कहता रहेगा कि दुर्भाग्य से ये बलाएँ मेरे सिर पर पड़ी हैं।

दरिद्रता एक नर्क है, जिससे इस समय के अंग्रेजों का कलेजा काँपता है—कार्लाईल।

किसी मनुष्य को यह अधिकार नहीं है—यह स्वत्व नहीं है-यह हक नहीं है—कि वह उसी लाचारी की दरिद्रता की, निर्द्धनता की, मूर्खता की हालत में पड़ा रहे, जिसमें वह रहता आया है। उसका आत्म-सम्मान कहता है कि वह ऐसी परिस्थिति से एकदम बाहर निकल जावे। उसका धर्म है-कर्तव्य है-फर्ज है-कि वह अपने को ऐसी स्थिति में ला रखे, जो सम्मान-पूर्ण हो—जो स्वतन्त्रता की मधुर सुगंध से सुवासित हो, जिसमें रहकर बीमारी के समय तथा आकस्मिक विपत्ति के समय वह अपने मित्रों को बोझ-रूप न हो पड़े और जो लोग उसके ऊपर आश्रित हैं उन्हें किसी तरह का कष्ट न हो।

डाक्टर ओरिसन स्विट मार्डन महोदय कहते हैं कि यदि आप अमेरिका के किसी धनिक से-लक्ष्मीपति से-पूछेंगे तो वह कहेगा वे दिन मेरे लिये सबसे ज्यादा संतोषपूर्ण और आनन्दमय थे जब मैं दरिद्रता के पंजे से निकल कर समृद्धि के आनन्द-भवन में प्रवेश कर रहा था, जब मैं अपूर्णता और लाचारी से निकल कर पूर्णता के द्वार में प्रवेश कर रहा था, जब मुझे ऐसा मालूम होने लगा था कि कमतरता से निकल कर समृद्धि के विशाल प्रवाह की ओर मैं जा रहा हूँ और उस मार्ग में बाधा डालनेवाला कोई नही है। वह गद्-गद् हृदय होकर कहेगा कि वह समय मेरे लिये बड़ा सुखकर बड़ा आनन्दप्रद—बड़ा संतोषदायक—बड़ा तृप्तिकर और बड़ा प्रोत्साहनदायक था। उस समय मुझे मालूम होने लगा था कि मेरा आत्म-विकास—आत्म-सुधार—हो रहा है। उस समय मैं सोचने लगा था कि अब मुझे दिव्यानन्दपूर्वक समय बिताने को मिलेगा, अब मैं आनन्दपूर्वक प्रवास कर—मनोहर जंगलों में घूम कर—प्रकृति देवी के स्वाभाविक सौन्दर्य्य से अपने हृदय को गद्गद् कर सकूंगा, और उसकी हरी भरी पोषाक और मनोहर छटा देखकर एकदम ही आनन्द और आनन्द के मीठे समुद्र में मग्न होकर अपने हृदय की रही सही कमतरता को निकालकर एकदम पूर्णता के आनन्द-प्रवाह में बहने लगूंगा। अब मैं अपने मित्रों को दरिद्रता के दुःखद पंजों से मुक्त करके उन्हें ऊँचा उठाऊँगा। सच है, ऐसे मनुष्य को स्वयमेव मालूम होने लगता है कि मुझमें ऊँचे उठने की शक्ति है। मुझमें वह शक्ति है कि संसार में मैं अपना वजन पैदा कर सकता हूँ। उसे इस बात का विश्वास हो जाता है कि "मेरे लड़कों को शिक्षा प्राप्त करने में अब मुझसा कष्ट न

सहना पड़ेगा।" मतलब यह कि इस वक्त उसका कार्यक्षेत्र संकुचित परिधि से बहुत बड़े मैदान में परिणत होने लगता है।

इस बात के सैकड़ों प्रमाण हैं कि हम महान् और दिव्य वस्तुओं के लिये बनाए गए हैं न कि दरिद्रता के पंजे में फँसने के लिये। कमी और दरिद्रता मनुष्य की दैवी प्रकृति के अनुकूल नहीं हैं पर कठिनाई इस बात की है कि हमें उस दैवी खजाने पर आधा विश्वास भी नहीं। हमें यह हिम्मत नहीं होती कि अपनी दैवी क्षुधा को तृप्त करने के लिये अपनी आत्मिक इच्छा को मुक्त-हृदय से प्रकाशित करें और बिना हिचकिचाए उस पूर्णता की याचना करें, जिस पर हमारा स्वाभाविक अधिकार है। हम क्षुद्र वस्तुओं की आकांक्षा करते हैं और उन्हें ही पाते हैं। इस तरह हम अपनी इच्छाओं को छिन्नभिन्न कर देते हैं और उस दैवी खजाने को संकुचित कर देते हैं, जो हमारे लिये रक्षित रखा गया था। अपनी आत्मिक अभिलाषाओं की याचना न कर मानो हम अपने मनो-मन्दिर के उस द्वार को बन्द कर लेते हैं, जो महान्—दिव्य और उपयोगी वस्तुओं का प्रवेश-द्वार है। इस तरह हमारा मानसिक क्षेत्र इतना संकुचित हो जाता है, हमारा आत्म-विकास इतना दब जाता है कि हमें क्षुद्रता और संकीर्णता के सिवा और कुछ भी दिखाई नहीं देता है।

हम उस सृष्टिकर्त्ता परमात्मा की विवेचना नही करते जिसके विषय में लोगों की ऐसी धारणा है कि वह हमारी प्रार्थनाओं को—याचनाओं को—प्रदान करने से शक्ति-हीन हो जाता है। हमारा विश्वास है कि उसका यह प्रकृति-स्वभाव ही है कि वह दे, प्रदान करे और हमारी हार्दिक अभिलाषाओं को परिपूर्ण करे। हम यदि उसके पास से ज्यादा मांगते हैं, तो

मत समझो कि उसके खजाने में कुछ कमी होती है। गुलाब का पुष्प सूर्य्य से केवल थोड़े से प्रकाश की याचना नहीं करता पर सूर्य्य का स्वभाव ही है कि वह अपने प्रकाश को खुले तौर से उसपर तथा अन्य सब पदार्थों की ओर फेंकता है। एक मोमबत्ती के जलते हुए यदि दूसरी मोमबत्ती जला दी जाय, तो उस पहली मोमबत्ती को कुछ हानि न होगी। मैत्री भाव रखने से हम अपने मैत्री भाव को एवं तत्संबंधी योग्यता को बढ़ाते हैं पर खोते कुछ नहीं।

यह जान लेना कि हम दैवी शक्ति के प्रबल प्रवाह को किस तरह अपनी ओर ला सकते हैं, और उसका ठीक उपयोग कर सकते हैं, हमारे जीवन के एक अलौकिक रहस्य का ज्ञान कर लेना है। यदि मनुष्य को इस दैवी तत्व का ज्ञान हो जाय तो वह अपनी कार्य्य सम्पादन शक्ति को हज़ारों गुना ज्यादा बढ़ा लेगा, क्योंकि फिर तो वह ऐश्वर्य्य-विभूति का सहयोगी और हिस्सेदार हो जायगा।

जब हम अनन्त से एकता करने लगते हैं, अपनी आत्मा को संस्कृत करने लगते हैं, जब हम अप्रामाणिकता, स्वार्थ और अपवित्रता को कूड़े करकट की तरह अपने हृदय से निकालकर फेंक देते हैं उस समय हमें इन दोषों से रहित शुद्ध परमात्मा के दर्शन होते हैं और हमें ईश्वर की श्रेष्ठता दीखने लगती है। हम श्रेष्ठता को जानने लगते हैं। पवित्रता के उपासक हो जाते हैं। वही मनुष्य ईश्वर के दर्शन कर सकता है जिसका अन्तःकरण शुद्ध, निर्मल और पवित्र है।

अपने बंधु-भगिनियों से स्वार्थपूर्ण और नीच लाभ उठाने का विचार जब हमारी आत्मा से निकल जायगा, तब हम ईश्वर के इतने निकट पहुँच जावेंगे कि विश्व की तमाम अच्छी चीज़ें

हमारी ओर बहने लगेंगी, पर कठिनाई इस बात की है कि हम अपने कुकृत्यों से और कुविचारों से उस दैवी प्रवाह के मार्ग में बाधा डाल रहे हैं, जो हमारी आत्मा की ओर आ रही है। अपनी आँखों के सामने आनेवाला कोई भी दुष्ट कार्य्य काले स्याह परदे के समान है, अथवा यों कहिये कि वह हमारी आँखो का जाला है, जिससे हम ईश्वर को नहीं देख सकते—श्रेष्ठता का भास नही कर सकते। दुष्ट कार्य्य ईश्वर से हमें सदा अलग रखता है।

जब हम विशाल दृष्टि से देखना सीखेंगे, जब हम संकीर्णता का विचार करना छोड़ देंगे, जब हम अपने संकीर्ण विचारों से अपने पैर ही पर कुल्हाड़ी मारना छोड देंगे, तब हमें मालूम होगा कि वह पदार्थ जिसकी हम खोज कर रहे थे, वही हमारी खोज कर रहा है और वह हमें आधे रास्ते ही में मिल जावेगा।

कभी इन बातों का रोना मत रोओ कि हमें अमुक चीज़ की कमी है, हमारे पास वे वस्तुएँ नही हैं, जो दूसरों के पास हैं, हम वह कार्य नहीं कर सकते जो दूसरे करते है। ऐसा करने से तुम अपने भविष्य को अन्धकारमय कर लोगे। जहाँ तक तुम अपने दुर्दैव के विचारों में लगे रहोगे, जहाँ तक तुम अपने निष्फल अनुभव पर आश्रित रहोगे वहाँ तक तुम्हारे में रही हुई आत्मशक्ति मुर्झाई हुई रहेगी और वह तुम्हारे अभिलषित पदार्थों को आकर्षित करने में नितान्त असमर्थ रहेगी। वह तुम्हारी कठिन दशा का कुछ भी उपाय न कर सकेगी।

हमारा मानसिक भाव—हमारा आदर्श—उस सत्य के

 होना चाहिए, जिसकी हम खोज कर रहे है।

समृद्धि के अंकुर पहले हमारे मन ही में फूटते हैं और फिर इधर उधर फैलाते हैं। दरिद्रता का भाव रख कर हम समृद्धि को अपने मानसिक क्षेत्र में कैसे आकर्षित कर सकते हैं ? क्योंकि इस दुर्भाव के कारण वह वस्तु जिसकी हम चाह करते हैं, एक पैर भी हमारी ओर आगे नही बढ़ाती। कार्य्य करना, किसी एक चीज के लिये और आशा करना किसी दूसरी की—यह बात बहुत ही शोचनीय है। मनुष्य समृद्धि की चाहे जितनी इच्छा करे, पर दुर्दैव के—गरीबी के—विचार समृद्धि के आने के द्वारों को बन्द कर देते हैं। सौभाग्य और समृद्धि दरिद्रता के एवं निरुत्साही विचारों के प्रवाह द्वारा नही आ सकते। उन्हें पहले मानसिक क्षेत्र में उत्पन्न करना चाहिये। यदि हम समृद्धिशाली होना चाहें तो पहले हमें उसके अनुसार अपने विचारों को बना लेना चाहिये।

क्यों आप एक विभिन्न श्रेणी में हैं ? इसका कारण केवल यही है न कि आप अपने को ऐसा मानते हो। यदि आप अपनी आत्मा में संकीर्णता रखते हैं तो आप अपने आपको बेशक क्षुद्र मानिये। पर ऐसा करने से आप अपने और समृद्धि के बीच में गड़हा खोदते है ! समृद्धि की ओर से निराश होकर यदि आप अपने विचार-प्रवाह को उसकी ओर ले जाना छोड़ दें तो समझ लीजिये कि वह हमेशा आपसे हवा बचाती रहेगी—कभी आपके पास न जायगी।

किस नियम से आप उस चीज़ की आशा कर सकते हैं, जिसके लिये आपको विश्वास नहीं है कि वह प्राप्त होगी ? किस दर्शनशास्त्र से आप यह बात सिद्ध कर सकते हैं कि आप उन चीजों को प्राप्त कर

सकेंगे, जिनके लिये आपका यह पक्का विश्वास है कि वे आपकी नहीं हैं ?

संकीर्णता—सीमाबन्धन हमही में है, जगत् पिता परमात्मा में नही। वह चाहता है कि उसके पुत्रों को विश्व की सब अच्छी चीज़ें प्राप्त हों क्योंकि उसने इन पदार्थों की सृष्टि अपने पुत्रों ही के लिये की है। यदि हम उन्हें लेने में असमर्थ हो रहे हैं तो यह दोष हमारा है। इसका केवल मात्र कारण यही है कि हम अपनी आत्मा को संकुचित कर रहे हैं।

दरिद्रता में विश्वास करना ही संसार में सब से बड़ा पाप है

कुछ मनुष्यों का दृढ़ विश्वास होता है कि कोई तो भी अवश्य ही गरीब होने चाहिये। वे गरीबी ही के लिये बनाये गये हैं। पर हम कहते हैं कि सृष्टिकर्ता परमात्मा ने मनुष्य के लिये जो ढाँचा बनाया है उसमे गरीबी, दरिद्रता, न्यूनता किसी की जगह नही रक्खी है। पृथ्वी पर गरीब आदमी न होना चाहिये। पृथ्वी पर ऐसी विपुल सामग्री भरी हुई है, जिसे हमने शायद ही स्पर्श किया होगा। शोक की बात है कि समृद्धि के भण्डार में रहते हुए भी हम दरिद्र रहते हैं। इसका कारण यह है कि हम अपने विचारों को क्षुद्र और संकीर्ण किये हुए रहते हैं।

अब हमें इस बात का पता चलता जा रहा है कि विचार वस्तुएँ है—ये हमारे चरित्र को संगठित करते हैं। यदि हम भयपूर्ण और दरिद्रता के विचारों में रमण करते रहें—यदि हम दरिद्रता से डरते रहें—यदि आवश्यकता के भय से

कांपते रहें—तो ये ही दरिद्रता और भय के विचार हमारे जीवन-प्रदेश में जड़ जमा लेंगे और उसके प्रभाव से हम एक ऐसे चुम्बक बन जावेंगे कि दरिद्रता और लाचारी अधिकाधिक परिणाम में हमारी ओर आकर्षित होकर आती रहेगी।

दयानिधि परमात्मा की इच्छा कदापि नहीं है कि हमें अपने उदर-निर्वाह के लिये भी कठिन समस्या का सामना करना पड़े। हमारा अमूल्य समय केवल इसी झगड़े में लगा रहे, जीवनसुधार का हमें समय ही न मिले। जीवन हमें इस वास्ते दिया है कि हम उसकी पूर्णता, सौंदर्य का विकाश करें। हमारी सब से बड़ी अभिलाषा यह होनी चाहिये कि हम अपने मनुष्यत्व का विकाश करें—हम अपने जीवन को सुन्दर और ऐश्वर्यशाली बनावें। केवल जड़ द्रव्य ही में अपना सारा जीवन खोने के बजाय मानवी गुणों को सङ्गठित करने में हम अपने समय का अधिक उपयोग करें।

निश्चय कर लो कि दरिद्रता के विचार से हम अपने मुँह को मोड़ लेंगे। हम केवल हठाग्रह से समृद्धि ही की आशा रक्खेंगे—हम केवल पूर्णता ही के विचार को अपने पास फटकने देंगे—ऐश्वर्यशाली आदर्श ही को अपनी आत्मा में जगह देंगे, जो कि हमारी स्वाभाविक प्रकृति के अनुकूल है। निश्चय कर लो कि हमें सुख समृद्धि प्राप्त करने में ज़रूर सफलता होगी। इस तरह का निश्चय, आशा और अभिलाषा तुम्हें वह पदार्थ प्राप्त करायेगी, जिसकी तुम्हें बड़ी लालसा है। हार्दिक अभिलाषा मे उत्पादक शक्ति भरी हुई है।

सच बात यह है कि हम अपने ही संसार में रहते हैं। हम अपने ही विचारों के फल हैं। हर एक मनुष्य अपने विचारानुसार अपने संसार को बनाता रहता है। वह अपने आसपास

के वायुमण्डल को या तो समृद्धि, ऐश्वर्य और पूर्णता से सुवासित रखता है तथा दरिद्रता, कमी और अभाव के विचारों से उसे गंदा और निरादरपूर्ण कर देता है।

ईश्वर के पुत्र—मानवगण इसलिये नही बनाये गये कि वे इधर उधर व्यर्थ ही मारे मारे फिरें—पर वे इस वास्ते बनाये गये है कि आकांक्षा करे-ऊपर की ओर देखें न कि नीचे की ओर। वे इस वास्ते नहीं बनाये गये हैं कि दरिद्रता-गरीबी-ही में सड़ा करे, पर वे इस वास्ते बनाए गए हैं कि महान् और श्रेष्ठ पदार्थों को प्राप्त करे। शांति अधिराज परमात्मा के, पुत्रों के भीतर पूर्ण श्रेष्ठता, पूर्ण सौंदर्य, पूर्ण महत्तता और पूर्ण ऐश्वर्य मौजूद है। पर दरिद्रता के भाव ने - विचारों की संकीर्णता ने हमें संकीर्ण बना रखा है। यदि हम जीवन के आदर्श को ऊँचा बनाये रखें-यदि हम अपने ऐश्वर्य्य के लिये बराबर दावा करते हैं—प्रचुर प्रकृत-धन की जिज्ञासा करते रहें-तो अवश्य ही हमारा जीवन परिपूर्ण और ऐश्वर्य्यशाली हो जायगा। दयासागर परमात्मा की यह इच्छा नहीं है कि हम गरीब रहें, पर हमारे भावों की संकीर्णता के कारण—हमारे जन्मसिद्ध आदर्श में नीचता आ जाने के कारण-हमारी ऐसी शोचनीय दशा हुई है। मनुष्य की रचना और परिस्थिति का विचार करने से इस बात के सैकड़ों प्रमाण मिलते हैं कि वह अनन्त रूप से उन महान् और दिव्य पदार्थों के उपभोग के लिये बनाया गया है, जिन्हें मैं समझता हूँ आजकल का कोई विरला ही भाग्यशील प्राप्त करता होगा और उनसे आनन्द उठाता होगा।

क्यों न हम महान और उत्तम चीज़ों की आशा करें, जब हममें ईश्वरीय गुण रखे गये हैं—जब कि हम ईश्वर के पुत्र

कहे जाते हैं। जो कुछ ईश्वर का है–विश्व में जो कुछ सौन्दर्य्य एवं सुख समृद्धि है—हम अवश्य ही उसके हक़दार हैं। अपने मन के भाव को पूर्णतया अच्छे पदार्थों के अभिमुख कर लेना–उन्हें मन, वचन काया से न्योता देकर बुलाते रहना यही उनकी प्राप्ति का राजमार्ग है।

अवश्य ही वहाँ कुछ गलती—भूल होनी चाहिये जहाँ राजाओं के राजा परमात्मा के पुत्र और पुत्रियाँ विश्व की महान्—और दिव्य पदार्थों का उससे उत्तराधिकार पाने पर भी–अवर्णनीय समृद्धि के समुद्र के किनारे रहने पर भी–घर के द्वारों पर ऐश्वर्य्य के बहते रहने पर भी–वे भूखों मरते हैं–अपनी पेट की ज्वाला को नहीं बुझा सकते।

क्या हमारे जीवन की अवस्थाएँ, क्या हमारी आर्थिक दशा, क्या हमारे मित्र तथा शत्रु, क्या हमारी ऐक्य दशा तथा विरोध सब–ही हमारे विचारों के फल हैं। यदि हमारा मानसिक भाव दरिद्रता के विचारों में मिल जायगा—यदि हमें अभाव सूझता रहेगा तो हमारी परिस्थिति भी इन्हीं के अनुकूल बन जायगी। इसके विपरीत यदि हमारे विचार खुले, उदार और विशाल होंगे—उनमें सुखसमृद्धि के विचार गूँजते रहेंगे और अभिलषित सुस्थिति को प्राप्त करने के लिये मन, वचन, काया से हम प्रयत्न करते रहेंगे तो हमारी परिस्थिति भी हमारे मनोवांछित पदार्थों के अनुकूल बन जायगी। जो कुछ हम अपने जीवन में प्राप्त करते हैं, वह हमारे विचार–द्वारों में होकर आता है और उसीके समान उसका रूप, रंग और गुण भी होता है।

यदि हम देखें कि कोई मनुष्य किसी असाध्य तथा लम्बी बीमारी और अपरिहार्य्य दुर्दैव के न होने पर भी वर्षों से ग़रीबी से सताया जा रहा है, तो हम समझ लेंगे कि उसके मानसिक भावों में कोई भूल अथवा विकार प्रवेश कर गया है, जो उसे सफल होने नहीं देता।

यदि हम अपनी अवस्था से असंतुष्ट हैं, यदि हमको ऐसा मालूम होता है कि हमारा जीवन कठोर है—हम भाग्यहीन हैं-यदि हम अपने भाग्य को दोष देते रहते हैं, तो इस बात को समझ लीजिये कि यह सब हमारे विचारों का और बहुत छोटे आदर्श का प्रकृत परिणाम है और इसमें हमारे सिवा और कोई दोषी नहीं है।

ठीक विचार ही हमारे जीवन को ठीक करता है, शुद्ध विचार ही हमारे जीवन को शुद्ध करता है और समृद्धि युक्त तथा उदार विचार ही उत्साहपूर्ण प्रयत्न का सहयोग पाकर इच्छित फल की प्राप्ति कराता है। यदि हम पूर्णतया सकल श्रेष्ठता के दाता, अनन्त खजाने के मूल पर तथा उस शक्ति पर जो हमें खाने को देती है—हमारी आकांक्षाओं को पूरी करती है, जो हमें अपनी दशा सुधारने के लिये प्रेरणा किया करती है—विश्वास करें तब हमें यह जान ही न पड़ेगा कि कमतरता क्या चीज़ है।

मनुष्य जाति में यही एक बड़ा रोग है कि उसका दैवी खजाने पर यथेष्ट विश्वास नहीं। हमें चाहिये कि हम उस दैवी खजाने के साथ वही सम्बन्ध रक्खे जैसे बच्चा अपने पिता के साथ रखता है। बच्चा रोटी खाते समय यह नहीं कहता "मैं इस डर के मारे कि फिर मुझे खाने को न मिलेगा, यह रोटी

नहीं खाता।" पर वह इस विश्वास और भरोसे पर कि, 'मुझे खाने की कमी नहीं है' सब कुछ खा लेता है।

हमें अपने संभाव्य पर आधा भी विश्वास नहीं रहता। यही कारण है कि जो कुछ हमें प्राप्त होता है वह बहुत ही क्षुद्र परिमाण में होता है। हम उस ऐश्वर्य्य पर अपना दावा नहीं करते जिस पर हमारा अधिकार है। यही कारण है कि अपूर्णता, संकीर्णता अथच कृशता हमारे जीवन को प्राप्त होती है। हम उदारतापूर्वक किसी वस्तु की माँग नहीं करते। हम क्षुद्र वस्तुएँ पाकर ही संतुष्ट हो जाते हैं। ईश्वर की इच्छा है कि हम सुखसमृद्धियुक्त जीवन व्यतीत करें—जो वस्तु हमारे लिये है वह विपुलता से हमारे पास रहे। कोई मनुष्य दुःखी और दरिद्री न रहे। आवश्यक वस्तुओं का अभाव मनाव-स्वभाव के अनुकूल नहीं है।

विचारों की एकता और सफलता

दृढतापूर्वक विचार कर लो कि तुम्हारी उस वस्तु के साथ एकता है, जिसकी तुम्हें ज़रूरत है। तुम अपने मन, वचन और काया को उस वस्तु की ओर लगा दो। उसकी प्राप्ति में तिल मात्र भी सन्देह मत रक्खो। तुम्हें उसके प्राप्त करने में ज़रूर सफलता अवश्य होगी–तुम उसे अवश्य आकर्षित कर सकोगे।

दरिद्रता–गरीबी–हमारा मानसिक रोग है। यदि तुम इससे पीड़ित हो–यदि तुम इस रोग के शिकार हो तो अपने मानसिक भाव को बदल दो और दुःख, दरिद्रता और लाचारी के विचार मन में लाने के बजाय सुख, समृद्धि ऐश्वर्य स्वाधीनता और आनन्द के विचारों से अपने मानसिक क्षेत्र को सुशोभित करो। फिर यह देख कर तुम्हारे आश्चर्य का पार न

रहेगा कि तुम्हारा सुधार—तुम्हारी उन्नति—कितनी ज़ोरों से हो रही है।

हमें विजय—सफलता—पूर्णतया मन की वैज्ञानिक क्रिया से प्राप्त होता है। जो मनुष्य समृद्धिशाली—सौभाग्यशाली होता है उसका पूर्णतया यह विश्वास रहता है कि मैं समृद्धिशाली एवं सौभाग्यशाली हो रहा हूँ। उसे अपनी पैसा कमाने की योग्यता पर विश्वास रहता है। वह अपने व्यवसाय को सन्देहान्वित और शंकाशील मन से शुरू नहीं करता। वह अपने समय को दरिद्रता की–गरीबी की–बातें तथा विचारों में नहीं गँवाता। वह दरिद्रता से लड़खड़ाता हुआ नहीं चलता और न वह गरीब सी पोशाक ही पहनता है। वह अपने मुख को उस वस्तु की ओर फेरता है जिसके लिये वह कोशिश कर रहा है, तथा जिसकी प्राप्ति में उसका पूरा विश्वास और दृढ़ निश्चय है।

देश में ऐसे हज़ारों गरीब लोग हैं जो अपनी गरीबी से अर्द्ध संतुष्ट हो गये हैं और जिन्होंने उसके विकराल पंजों से निकलने का प्रयत्न ही छोड़ दिया है। अब चाहे वे कठिन परिश्रम करें, पर उन्होंने अपनी आशा खो दी है—स्वाधीनता प्राप्त करने की प्रत्याशा नष्ट कर दी है।

बहुत से मनुष्य ऐसे होते हैं जो गरीबी के डर से—कमतरता की संभावना से—अपने आपको गरीब बना लेते हैं।

देखा जाता है कि बहुत से बच्चों का मन गरीबी के विचार से भर दिया जाता है—सुबह से शामतक वे गरीबी ही गरीबी के विचारों को सुनते रहते है। उनकी दृष्टि जिधर पड़ती है उधर ही दरिद्रता के चित्र उनकी नज़र पड़ते है। हर मनुष्य के मुँह से ऐसे ही आत्म-घातक विचारों को

सुनते हैं। मतलब यह है कि उनमें चहुँ ओर से दरिद्रता ही दरिद्रता की प्रेरणा हुआ करती है?

इस बात में क्या आश्चर्य है कि जो बच्चे इस तरह के वायु-मण्डल में बड़े होते हैं वे अपने मा बाप की दैन्य-ग्रस्त स्थिति को फिर ताज़ी कर देते हैं अर्थात् वे जले पर फिर नमक छिड़क देते हैं।

क्या आपने कभी इस बात का विचार किया है कि ग़रीबी से जो आप भय खाते हैं, सफलता में जो आपकी खिन्नता है और दुर्दिन से जो आपका कलेजा काँपता है, ये बातें आपको केवल दुखी ही नहीं करती है, परन्तु आपको अपनी आर्थिक दशा सुधारने के योग्य भी नहीं रखतीं? इस तरह आप उस दुःसह भार को और भी भारी कर रहे हैं जो पहले ही आपसे नहीं उठता था।

कोई परवाह नहीं कि आपके आसपास का दृश्य भयङ्कर हो, कोई परवाह नहीं कि आपकी परिस्थिति कठोर हो, पर उस पदार्थ से आप अपने मन को हटा लीजिये जो आपको अहितकर मालूम होती हो, उस स्थिति से अपने मुख को आप फेर लीजिये जो आपको गुलाम बनाती हो और आपका सर्वोत्कृष्ट विकाश होने में बाधा देती हो।

दुःख और दरिद्रता के विचार आत्मघातक हैं

दुःख-दरिद्रता के विचार रख कर कौन से तत्व से आप समृद्धि को उत्पन्न कर सकते हैं। आप की दशा आप के मानसिक भावों के–आपके आदर्श के–अनुकूल रहेगी। क्या हमारे आदर्श और क्या हमारे मानसिक भाव–ये हमारी आत्मा में

पैठ जाते हैं ? यदि ये दरिद्रता के विचारों से ग्रस्त होंगे तो हमारी दशा भी वैसी ही होगी।

मान लीजिये कि एक लड़का है जो वकीली के लिये प्रयत्न कर रहा है, पर उसे आशा नहीं है कि इसमें उसे पूरी सफलता मिलेगी तो ज़रूर वह अपने प्रयत्न में असफल होगा। हम वही पाते हैं जिसकी हम आशा करते हैं। यदि हम किसी की आशा न करे तो हमें कुछ भी न मिलेगा। नदी अपने उद्गम-स्थान से ज्यादा ऊँची नहीं उठ सकती। जो मनुष्य गरीब होने की पूरी अथवा आधी आशा रखता है वह धनवान् कभी नहीं हो सकता।

प्रत्येक मनुष्य को चाहिये कि वह अपने सौभाग्य-सूर्य की ओर मुँह करके सीधा खड़ा रहे। विजय और सुख पर प्रत्येक मानव प्राणी के स्थायी स्वत्व हैं।

कुछ लोग पैसा कमाना चाहते हैं पर वे अपने मन को इतना संकुचित रखते हैं कि वे उसे विपुलता से नही पा सकते।

वह मनुष्य जो समृद्धि की आशा रखता है, हमेशा अपने मनोमन्दिर में समृद्धि को उत्पन्न करता रहता है और उसकी आर्थिक इमारत को बनाया करता है।

हमें चाहिये कि अब से हम सुख समृद्धि की नई मूर्ति—नया आदर्श बनावे। क्या हमने बहुत दिनों तक दरिद्रता, दुःख और दुर्भाग्य के मालिक शैतान की आराधना नही की? अब हमें इस विचार पर जम जाना चाहिये कि हमें हर एक चीज़ देनेवाला ईश्वर ही है। यदि हम उसके साथ तल्लीन हो जावें—उससे निकटस्थ सम्बन्ध कर लें—तो परमात्मा के अटूट भण्डार से

हर चीज़ विपुलता से हमें प्राप्त होगी और हमें किसी प्रकार की कमी न रहेगी।

गरीब मनुष्य वह नहीं है जिसके पास थोड़ी सी जायदाद है वा जिसके पास कुछ जायदाद नहीं; पर गरीब वह है जो दरिद्रता के विचारों से ग्रस्त है, जिसकी सहानुभूति में दरिद्रता झलकती है, जिसके विचारों में दरिद्रता की झलक दीख पड़ती है; जिसके गुण-ग्रहण की शक्ति में दैन्य का अभाव दीखता है, जो आत्म-पतन का अपराध करता है। वह मानसिक दरिद्रता, अर्थहीनता ही है जो हमें गरीब बनाती है।

कितने थोड़े लोग इस बात को जानते हैं कि मन के साहसिक कार्य में कितनी गज़ब की शक्ति भरी हुई है। दृश्य संसार में प्रकट होने के पहले हर चीज़ मानसिक संसार में प्रकट होती है। यदि हम किसी पदार्थ को अपनी मानसिक सृष्टि में अच्छी तरह निर्माण कर सकेंगे तो दृश्य सृष्टि में भी हम उसे अच्छी तरह बना सकेंगे।

धनवान होने का असली रहस्य

कोई भी करोड़पति पहले मानसिक सृष्टि में समृद्धिशाली स्थिति को उत्पन्न करता है जिससे समृद्धि उसकी ओर प्रबल वेग से जा पहुँचती है। बड़े बड़े समृद्धिशाली पुरुष अपने हाथ से बहुत कम काम करते है, पर वे विशेषतया अपने मन में समृद्धि की इमारत को खड़ी करते है। वे कार्य्यकर स्वप्नों को देखते रहते हैं, वे अपने मानसिक प्रवाह को अनन्त शक्ति के महासागर की ओर प्रवाहित करते रहते हैं और अपने आदर्श–अपनी अभिलाषा के–अनुकूल फलों को उसमें से निकालते रहते हैं।

समृद्धि के नियमों को यथोचित रीति से पालन करने से जैसा प्रत्यक्ष लाभ होता है, वैसा कंजूसी से एक एक कौड़ी जोड़ने से नहीं होता। कंजूसी से हमारी आत्मा मलीन, संकीर्ण एवं अनुदार हो जाती है और इससे हमें विशेष लाभ भी नहीं होता। हम अपने मनोयोग की ओर जाते हैं। यदि हम अपने मन को दुःख, दरिद्रता और लाचारी की ओर लगावेंगे तो हमें इन्हीं सी दशा प्राप्त होगी।

सौभाग्य और समृद्धि को प्रायः हम इसी मतलब में लेते हैं कि हर चीज़ जो हमारे लिये लाभदायक है हमें मिलती रहे। आत्मा को प्रकाशित करनेवाली प्रत्येक वस्तु हमें विपुलता से प्राप्त होती रहे। उन चीज़ों का हमारे पास भण्डार रहे जो श्रेष्ठ अथच अत्युच्च हैं। सौभाग्य-समृद्धि-उस हर पदार्थ का नाम है जो हमारे व्यक्तित्व-हमारे अनुभव को वैभवशाली बनता रहे।

सच्चा सौभाग्य—सच्ची समृद्धि—तो आत्मिक वैभव—आत्मिक पूर्णता का—आन्तरिक ज्ञान ही है।

कार्य्य और आशा
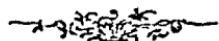
समृद्धि का आरम्भ पहले मन में होता है और जब तक मानसिक भाव उसके अनुकूल नहीं हो लेते तब तक उसकी प्रत्यक्ष सिद्धि होना असम्भव है। यह बात बहुत बुरी है कि काम करना किसी एक पदार्थ के लिये और आशा रखना किसी दूसरे की। जब उन्हें पद पद पर असफलता दीखती है, तब तुम्हीं बताओ कि विजयद्वार में तुम्हारा प्रवेश कैसे हो सकेगा?

बहुत से लोग जीवन को ठीक मार्ग पर नहीं लगाते। वे अपने प्रयत्न के अधिकांश भाग को निर्बल और शक्तिहीन बना देते हैं, क्योंकि वे अपने मानसिक भाव को अपने प्रयत्न के अनुकूल नहीं बनाते अर्थात् वे काम तो किसी एक पदार्थ के लिये करते हैं और चाहते हैं किसी दूसरे को। हाथ में लिये हुए कार्य्य के विपरीत मानसिक भाव रखने से, वे उस कार्य में सफलता प्राप्त नहीं कर सकते। वे इस कार्य को इस निश्चय से हाथ में नहीं लेते कि इसमें हमें अवश्य सफलता और विजय प्राप्त होगी। यही कारण है कि उन्हें सफलता और विजय का आनन्द नहीं मिलता, क्योंकि सफलता और विजय के लिये दृढ़ निश्चय हो जाना ही मानो उसके लिये क्षेत्र तैयार करना है।

धन के लिये आकांक्षी तो रहना और यह कहते रहना कि क्या करें गरीब है, दरिद्र हैं, अपनी धन कमाने की योग्यता

को कम करना है। ऐसे मनुष्यों के लिये यह कहना अनुचित न होगा कि ये जाना चाहते हैं तो पूर्व की ओर पर पश्चिम की ओर अपने पैरों को आगे बढ़ा रहे हैं।

ऐसा कोई पदार्थ नहीं है जो मनुष्य को उस दशा में सफलता लाभ करने में सहायता करे, जब वह अपनी तत्सम्बन्धिनी योग्यता-शक्ति पर सन्देह कर रहा हो और यों असफलता के तत्वों को अपनी ओर आकर्षित कर रहा हो।

वे मनुष्य जो सफलता-विजय—प्राप्त करना चाहते हैं उन्हें विचार भी इन्हीं बातों का करना चाहिये। उन्हें सुख, समृद्धि, उन्नति और सफलता के ही विचार करना चाहिये।

जिस ओर तुम अपना मुँह करोगे, उसी दिशा को तुम जाओगे। यदि तुम दरिद्रता—कायरता—की ओर मुंह करोगे तो तुम्हारी गति इन्हीं की ओर होगी। इसके विपरीत यदि इनकी ओर से अपना मुँह मोड़ लोगे—इन्हें धिक्कारोगे-इनका विचार करना छोड़ दोगे--इनकी बात को मुँह पर न लाओगे तो तुम्हारी उन्नति होने लगेगी- समृद्धि के आनन्द-प्रद भवन में तुम्हारा प्रवेश होने लगेगा।

बहुत से मनुष्य विपरीत भावना से—उलटे इरादे से—कार्य करते है, अर्थात् उन्हें समृद्धिशाली होना जँचता है, पर उनके हृदय में यह विश्वास नहीं होता कि हम ऐसे कैसे हो जावेंगे। यही कारण है कि सफलता उनके लिये असम्भव सी हो जाती है। सच है, हमारी दरिद्रता और अर्थहीनता के भाव ही ने—हमारे संशय और भय ही ने—हमारे आत्म-विश्वास की कमी ने—अनन्त ऐश्वर्य के अविश्वास ही ने—हमें गरीब, दरिद्री और लाचार बना रक्खा है।

तुम गरीब सा आचरण मत करो जब कि तुम अपनी सारी

शक्ति को पैसा कमाने में खर्च कर रहे हो। तुम्हें चाहिये कि तुम अपने मन का भाव ऊँचा और समृद्धि युक्त रक्खो। यदि तुम अपने आस पास के वायुमण्डल को बुरे विचारों से गन्दा रक्खोगे, तो तुम्हारे मन में भी वैसा ही संस्कार जम जायगा और कभी तुम अपनी ओर पैसा आकर्षित नहीं कर सकोगे।

अंग्रेजी में एक कहावत है कि भेड़ा जितनी वार वें वें करता है, उतनी ही वार वह अपने मुँह का ग्रास खो देता है। यही वात तुम पर भी घट सकती है। हर समय जब कि तुम अपने भाग्य को दोष देते रहते हो अर्थात् यह कहते रहते हो कि मैं गरीब हूँ, मैं वह नहीं कर सकता जो दूसरा करता है, मैं कभी धनवान् न होऊँगा-मुझ में दूसरो सी बुद्धि नहीं है—मेरी आशा और सफलता पर पानी फिर चुका—दैव मेरे विपरीत है-अपने आप पर विपत्ति का पहाड़ गिराते हो और सुख शांति को लूटनेवाले शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने के मार्ग को ज़्यादा कठिन बनाते जा रहे हो, क्योंकि जितनी वेर तुम उनके विषय में विचार करोगे, उतने ही उनके संस्कार तुम्हारी आत्मा में बैठते जावेंगे।

ये विचार चुम्बक हैं, जो अपने सम पदार्थों को आकर्षित करते हैं। यदि तुम्हारा मन गरीबी और आधिव्याधि ही के विचारों में रमता रहेगा तो तुम्हें अवश्य ही गरीबी और व्याधि से तंग होना पड़ेगा। इस बात को संभावना नहीं हो सकती कि तुम जिस तरह के विचार रखते हो उनके परिणाम उन विचारों के विपरीत हों; क्योंकि तुम्हारा मानसिक भाव ही उस इमारत का नमूना हैं, जो तुम्हारे जीवन में बनती है, तुम्हारी कार्य्य-निपुणता का आरम्भ पहले तुम्हारे अपने मन ही में होता है।

यदि तुम हमेशा क्षुद्र व्यवसाय—तुच्छ व्यापार ही का—

विचार करते रहोगे, उसी के लिये तैयारी करते रहोगे, उसी की आशा लगाए रहोगे, और हमेशा भीखा करोगे कि क्या करें वक्त बडा नाजुक आ गया है, व्यापार मंदा होता जा रहा है तो समझ लो कि इसका परिणाम तुम्हारे लिये बड़ा ही आत्मघातक होगा, व्यापार की उन्नति के सब द्वार तुम्हारे लिए बन्द हो जावेंगे। सफलता—कामयाबी—प्राप्त करने के लिये तुम चाहे जितना सिरतोड़ परिश्रम करो, पर यदि तुम्हारा विचार असफलता-नाकामयाबी के भय से ग्रस्त हो गया है तो समझ लो कि यह विचार तुम्हारे परिश्रम को बेकाम कर देगा—तुम्हारे प्रयत्न को गु बना देगा। इससे विजय—सफलता पाना तुम्हारे लिये असम्भव हो जायगा।

इस बात का डर रखने से कि कहीं हम असफल—नाकामयाब—न हो जावें—हम तंगी में न आ जावें—हम लाचार न हो जावें, हजारों मनुष्य अपनी इष्ट सिद्धि से अर्थात् उन पदार्थों से जिनकी वे चाह करते हैं बिल्कुल कोरे हाथ रह जाते हैं। क्योंकि इस तरह के डर से वे अपनी शक्ति को पंगु बना देते हैं। फिर उन्हें सफलता कैसे प्राप्त हो सकती है।

आशावाद और निराशावाद

हमें चाहिये कि हम हरएक पदार्थ को ऐसे पहलू में देखे जो उज्ज्वल, आशाजनक और निश्चयात्मक हो। हमें विश्वास कर लेना चाहिये कि जो कुछ होगा अच्छा ही होगा। सत्य की हमेशा विजय होगी। हमे निश्चय कर लेना चाहिये कि सत्य असत्य पर विजयी होगा। हमें जान लेना चाहिये कि एकता और स्वास्थ्य ही सत्य है और विरोध और व्याधि असत्य

है—मानवी स्वभाव के प्रतिकूल है। ऐसे दिव्य विचार रखने से हम भी आशावादियों की शुभ श्रेणी में आ जावेंगे क्योंकि आशावादियों के ही ऐसे विचार होते है। इन्ही विचारों से संसार में एक प्रकार का अलौकिक सुधार हो जाता है।

आशावाद मानव प्राणियों के लिये अमृत है। जैसे सूर्य से वनस्पति को लाभ होता है अथवा यों कहिये कि जीवन प्राप्त होता है वैसे ही आशावाद से मनुष्यों मे जीवनशक्ति का संचार होता है। यह एक मनोसूर्य का प्रकाश है जो हमारे जीवन को बनाता है—सौन्दर्य की अलौकिक छटा से उसे विभूषित करता है और उसका विकाश करता है। मानसिक शक्तियाँ इस प्रकाश से वैसे ही फलती फूलती हैं जैसे सूर्य के प्रकाश से वनस्पतियाँ।

निराशावाद का परिणाम ठीक इसके उल्टा होतो है। यह भयंकर राक्षस है, जो हमारे नाश की ताक में बैठा रहता है—जो हमारी बढती नही होने देता।

जो मनुष्य हर पदार्थ की अन्धकारमय बाजू को देखता है—जो हमेशा बुराई और असफलता ही के वचन मुँह से निकालता रहता है—जो केवल जीवन के अन्धकारमय एवं अप्रीतिकर अंश ही को देखता रहता है, उसकी राह दुःख और दारिद्र्य हमेशा देखते रहते हैं।

किसी पदार्थ में यह शक्ति नही है कि वह उस पदार्थ को खींचे जो कि उसके विपरीत गुणवाला है। हर पदार्थ अपने गुण ही को प्रकाशित करता है, और उन्हीं चीज़ों को अपनी ओर आकर्पित करता है जो कि उसके समान गुण धर्मवाले होते हैं। यदि कोई चाहे कि मैं सुखी और समृद्धिशाली होऊँ तो उसे चाहिये कि वह सुख समृद्धि ही के विचार किया करे—इफ-

रात के खयाल से अपने मन को हरा भरा करता रहे—अपनी आत्मा को उदार बनाता जावे। जिसे गरीबी का भय है, उसके पीछे ग़रीबी भी हाथ धोकर पड़ती है।

यदि तुम सुख प्राप्त करना चाहते हो, तो दुःख के विचार को हटा दो. यदि तुम धन प्राप्त किया चाहते हो तो गरीबी के खयाल को तिलांजलि दे दो। जिन पदार्थों से आप भय रखते हों, उनसे किसी तरह का अपना सम्बन्ध मत रखो। वे तुम्हारी उन्नति के—तुम्हारे विकास के—घोर शत्रु हैं। उनका समूल नाश कर दो। अपने मन से उन्हें निकाल दो। उन्हें भूल जाओ। आप अपने मनोमन्दिर में उन पदार्थों के विचारों को जगह दो जिनको आप चाहते हो, जिनकी प्राप्ति से आपकी आत्मा सन्तुष्ट और आनन्दित होती हो, फिर यह देखकर आपके आश्चर्य्य का पार न रहेगा कि वे पदार्थ जिनकी आप बाट जोह रहे थे आपकी ओर खिंचे हुए आ रहे हैं।

हम अपने कार्य्य के लिये—उद्देश्य के लिये जैसा अपना मनोभाव बनाते है उसका उनके साथ अर्थात् उस कार्य और उद्देश्य के साथ गहरा सम्बन्ध हो जाता है। यदि आप यों भींखते हुए किसी काम पर जाते हों कि क्या करें मजबूरन ऐसा क्षुद्र काम करना पड़ता है, इसमें बड़ी ही परेशानी है, इससे हम कैसे तरक्की पा सकेंगे? क्या भगवान ने ऐसा काम हमारे सिर रखकर जन्म भर ही के लिये रूखी सूखी रोटी हमारे पल्ले बाँधी है? क्या हम हमेशा ही कड़ी धूप में काम किया करेंगे? क्या हमें कभी भी आराम न मिलेगा? क्या हम हमेशा ही ग़रीबी में सड़ा करेंगे? तो निश्चय समझ लो कि इस तरह के थोथे विचार तुम्हें उन्नति से बहुत दूर रक्खेंगे? तुम . । ही परेशानी की हालत में सड़ा करोगे।

इसके विपरीत यदि आप अपने भविष्य को प्रकाशमान देखते रहोगे, यदि आप यह विश्वास कर लोगे कि शीघ्र ही इस क्षुद्र काम से निकलकर हम उन्नति के शिखर पर पहुँचने वाले हैं, हम अपने क्षुद्र जीवन से निकल कर उस समुन्नत जीवन में जा रहे हैं, जहाँ सौन्दर्य, शान्ति और आनन्द भरे हुए हैं और यदि आपकी अभिलाषाएँ निर्दोष हैं और आप अपनी आँखों को अपने उस चरम उद्देश्य पर लगाए हुए हों, जिसके लिये आपको यह विश्वास है कि वह अवश्य ही सफल होगा और यदि आपको यह विश्वास है कि आप में वह योग्यता है जिससे आप उसे सफल कर सकते हों तो आपको सफलता ज़रूर प्राप्त होगी।

यदि हम अपने मन का यह निश्चय कर लें कि कभी न कभी हम अमुक कार्य को अवश्य ही पूरा कर सकेंगे—हम अपने उद्देश पर दृढ़ता से जमे रहेंगे और इस बात का पक्का भरोसा हो जाय कि कहीं भी किसी तरह हम उसे सफलता-पूर्वक सिद्ध कर सकेंगे, तो हमारे मन में वह उत्पादक-शक्ति आ जायगी जो हमारे मनोवांछित फल को प्राप्त कराने में हमारी बड़ी सहायक होगी।

मैंने ऐसा एक भी मनुष्य नहीं देखा कि जिसको अपनी आत्मा में विश्वास होते हुए भी—हाथ में लिये हुए कार्य को पूरा करने की योग्यता पर पूरा भरोसा होने पर भी—अपने उद्देश की ओर निरन्तर अपनी आँख रखते रहने पर भी—उसकी प्राप्ति के लिये उचित प्रयत्न करने पर भी—सफलता—विजय प्राप्त न हुई हो। उच्चाभिलाषा पहले आत्म-प्रेरणा के रूप में परिणत होती है और फिर सिद्धि के रूप में।

हमेशा इस बात का यत्न करते रहो कि तुम्हारे विचार

उच्च और महत् बने रहें। जो कुछ तुम करना चाहते हो उसके लिये कभी संशय मत करो।

संशय बड़े घातक हैं। ये हमारी उत्पादक-शक्ति को नष्ट कर देते हैं—हमारी अभिलाषा को पंगु और शक्ति-हीन कर देते हैं। तुम अपने हृदय पर हाथ रख कर अपने आपको यह सूचना करते रहो कि जिसकी जरूरत मुझे है वह मुझे अवश्य ही मिलेगा, यह मेरा अधिकार है और उसे प्राप्त करने मैं चला हूँ।

हमेशा अपने मन में ये विचार रक्खो कि हम सफलता के लिये—विजय के लिये—सुस्वास्थ्य एवं सुख के लिये-और परोपयोग के लिये बनाये गये हैं और हमें इनसे कोई विहीन नहीं रख सकता। इस तरह के आशामय उद्गारों को बार बार दोहराने की अपनी आदत डाल दो। अपनी अन्तिम विजय पर निश्चयात्मक विचार प्रकट करने की अपनी बान बनाओ, और इसके चमत्कारिक फल देखो कि आपका मनोवांछित पदार्थ किस तरह आपकी ओर खिचा हुआ चला आ रहा है? पर यहाँ एक बात का स्मरण रखो कि तुम्हारे उद्गारों में—तुम्हारे मे—तिलमात्र भी संशय न घुसने पावे।

शक्तिसागर परमात्मा की यह इच्छा नहीं है कि मनुष्य अपनी परिस्थिति के हाथ का कठपुतला बना रहे-अपनी आस पास की दशा का गुलाम बना रहे—पर उसकी यह इच्छा है कि मनुष्य अपनी परिस्थिति को आप बनावे—अपनी स्थिति को आप उत्पन्न करे।

हमारी मानसिक शक्तियाँ हमारी सेविकाएँ हैं। जो कुछ हम उनसे चाहते हैं, वे हमें वही देती हैं। यदि हम उन

पर विश्वास रक्खे, उन पर अवलंबित रहे, तो वे अपनी उमदा से उमदा चीज़ें हमें देंगी।

जिन लोगों की प्रकृतियाँ निषेधात्मक रहती हैं वे इस बात की राह देखा करते हैं कि देखें क्या होता है? ऊँट किस करवट बैठता है। उनमें यह शक्ति नहीं रहती है कि वे हर पदार्थ को अपने अनुकूल बना लें।

यह निश्चयात्मक प्रकृति ही है कि जिससे दुनिया के बड़े बड़े काम हुए हैं। इससे मनुष्य अपना मन-चाहा काम कर सकता है।

प्रायः ऐसा भी देखा जाता है कि बहुत से मनुष्य बाहरी प्रभाव से अपनी निश्चयात्मक प्रकृति निषेधार्थक प्रकृति में बदल देते हैं। वे अपने आत्म-विश्वास को खो देते हैं। उनका स्वशक्ति से विश्वास उठता जाता है क्योंकि वे लोगों के निराशा-जनक वचनों से प्रभावित हो जाते हैं, लोगों से वे हमेशा अपूर्णता के विचार सुना करते हैं। लोग उन्हें कहा करते हैं कि तुम्हें अपने व्यवसाय का ज्ञान नहीं। तुम उस व्यवसाय के योग्य नहीं हो जिसे अभी तुम कर रहे हो। इससे उनकी प्राथमिक शक्ति मारी जाती है और फिर वे किसी कार्य को पहले जैसे उत्साह से नहीं करते। वे अपनी निर्णय करने की शक्ति को खो देते हैं, किसी महत्वपूर्ण कार्य्य का निर्णय करने से डरते हैं। उनका मन ठिकाने नहीं रहता। इस तरह वे नेता होने के बदले अनुयायी हो जाते हैं।

आत्मा की अलौकिक शक्ति

हमारी आत्मा में एक बड़ी अलौकिक शक्ति भरी हुई है, जिसका विवेचन हम नहीं कर सकते, पर जिसका अनुभव हमें

होता है। वह हमारी आज्ञाओं को मानती है, हमारे निश्चय को परिपुष्ट करती है।

मान लीजिये कि यदि हम यह विचार करें—यह मान बैठें कि हम नाचीज़ हैं—तुच्छ हैं—क्षुद्र हैं—हीन कीड़े हैं, "हम दूसरों के समान नहीं हैं" तो हमारी आत्मा के रजिष्टर में ये सब बातें लिख ली जायँगी और उसका परिणाम यह होगा कि हम सचमुच वैसे ही बन जावेंगे। यदि हम तंगी के-कमज़ोरी के—अयोग्यता के—अकर्मण्यता के विचारों ही को प्रकट करते रहेंगे तो इनका प्रतिबिम्ब हमारी आत्मा में पड़ेगा, जो बड़ा ही अशुभ है।

इसके विपरीत यदि हम निश्चयपूर्वक यह मानें कि विश्व की तमाम अच्छी चीज़ों के हम अधिकारी हैं—उन पर हमारा स्वाभाविक हक है और यदि हमें अपने ऐश्वर्य पर दृढ़ विश्वास है, हम दृढता से इस बात की श्रद्धा रखते हैं कि हम अपने जीवनोद्देश को भलीभाँति पूरा कर रहे हैं—यदि हमारा यह निश्चय है कि शक्ति मेरी है, स्वास्थ्य मेरा है, आधि व्याधि, निर्बलता और विरोध से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है तो मानो हम अपने मन में ऐसी उत्पादक और निश्चयात्मक शक्ति को उत्पन्न कर रहे हैं जो हमारी सब अभिलाषाओं को—सकल मनोरथों को—ऊँचे जीवनोद्देश को—हरा भरा कर सफल करेगी, हमारी पतित दशा से उद्धार करेगी।

विचार दो तरह के होते हैं। एक वे जो हमारे शरीर को-हमारे मन को—हमारी आत्मा को—परिपुष्ट और पूर्ण करते हैं—उनमें दिव्यता लाते हैं—आनन्द, उत्साह और तेज की उनमें वर्षा करते हैं। और दूसरे वे जो हमारे शरीर को, हमारी ` को गिराते हैं—उन्हें निर्बल और हीन करते हैं—दुःख,

दरिद्रता, आधि व्याधि के दुर्भाव से उन्हें गन्दा करते हैं। जहाँ पहले तरह के विचार हमारे रक्षक हैं वहाँ दूसरे प्रकार के विचार हमारे भक्षक हैं।

हमारी विचार-शक्तियों मे कितना बल है-कितना दृढ़ाग्रह है, इस बात से हम अपनी कार्य-संपादिका शक्ति का परिमाण जान सकते है। बहुत से मनुष्यों की विचार-शक्ति इतनी कमज़ोर—इतनी निर्बल—होती है कि वे अपने मन को आवश्यक कार्य-कर बल से सुसङ्गठित नहीं कर सकते। इससे वे संसार में अधिक कार्य नही कर सकते।

हम किसी मनुष्य से मिलते ही यह बात कह देंगे कि उसकी विचार शक्ति प्रबल है कि निर्बल क्योंकि उसके मुँह से निकलनेवाले शब्दों से इस बात का पता चल जायगा।

बहुत से मनुष्यों की विचार-शक्ति ऐसी प्रबल होती है कि दूसरों पर वे अपना प्रभाव तत्काल जमा लेते हैं। उनके दर्शनो से लोगों में नवीन जीवन का संचार होने लगता है। दुनियाँ आपोआप ऐसे मनुष्यों के लिये रास्ता कर देती है। संसार में वे शक्ति का प्रकाश करते है। संसार का वे संचालन करते है। उनके शब्दों से संसार के बड़े बड़े कार्य्य हो जाते हैं। क्योंकि लोगों में एक स्वाभाविक गुण रहता है कि वे उच्च आत्मा की आज्ञा पालन करने में अपना अहोभाग्य मानते हैं।

जब हम किसी सच्चे महात्मा से—दिव्य पुरुष से—मिलते है, चाहे उसकी और हमारी पहले जान पहचान न रही हो तो भी उसके दर्शन मात्र से हमें ऐसा मालूम होने लगता है मानो यह हमारे शरीर मे एक प्रकार की अलौकिक भावना का—दिव्य जीवन का संचार कर रहा है। उस समय हमारे हृदय पर एक अद्भुत प्रभाव पड़ने लगता है। उनके विषय में हमें

यह तत्काल मालूम होने लगता है कि इनमें नेता होने की शक्ति मौजूद है। इनमें वह शक्ति विद्यमान है जो सृष्टि का संचालन कर सकती है। ऐसे पुरुष के लिये हमे विश्वास होने लगता है कि इसकी कार्य्यसफलता में कोई भी बाधा उपस्थित नही कर सकता। इसके विपरीत जब हम किसी संकीर्ण हृदय वाले मनुष्य से मिलते हैं तो उसके हृदय का हम पर निर्बल और निषेधात्मक प्रभाव पड़ता है। उसको देखते ही हमें मालूम होने लगता है कि इसका अधःपतन हो चुका —यह अपने पथ पर प्रकाश नही डाल सकता। यदि तुम चाहते हो कि लोगों को हमारी शक्ति का परिचय मिले तो तुम अपनी शक्तियों का विकास करो।

सब विद्याओं में यह शिरोमणि विद्या है कि हम अपने जीवन को स्थायी सफलता आर विजय से विभूषित करें और यह कार्य्य कठिन नहीं है, यदि हमारा जीवन ठीक तरह संस्कृत किया जाय।

यदि कोई ग्रेजुएट उक्त विद्या का ज्ञान प्राप्त किए बिना ही संसार में प्रवेश करता है, तो समझ लो उसका नाश—उसकी असफलता—बहुत दूर नहीं है। उसके संशय, उसके भय, उसकी आत्म-विश्वास की न्यूनता—उसकी डरपोक और निषेधात्मक प्रकृति उसके मन को निषेधात्मक बनाकर उसकी निश्चयात्मक उत्पादक और स्वाभाविक शक्ति को संपूर्णतया नष्ट कर देंगे और उसे बहुत ही बुरी स्थिति में ला पटकेंगे।

सारे संसार के दर्शन शास्त्र और भाषाएँ जानने से विद्यार्थी को यह जानना विशेष लाभदायक है कि मैं अपने मन को निश्चयात्मक रखकर किस तरह अपनी सर्वोच्च उत्पादक शक्ति की उन्नति करूँ।

प्रायः हम देखते हैं कि बहुत से कॉलेजों में उपाधिधारी ग्रेजुएट इस कारण असफल हो जाते हैं कि उन्होंने अपनी मानसिक प्रकृति को निषेधात्मक बना रक्खी है। हम समझते हैं कि असंस्कृत और अविकसित मानसिक शक्ति के रहते हुए वर्षों तक शक्तियों को संस्कृत करना और अपनी कमज़ोर और लूली प्रकृति को वैज्ञानिक रीति से सुसङ्गठित करना कहीं अधिक श्रेयस्कर है, क्योंकि ऐसा करने से हम कॉलेज के पठन-पाठन में भी बहुत ज्यादा सफलता प्राप्त कर सकते हैं और अपने भावी संसार को सफलता प्राप्त कर सकते हैं और अपने भावी संसार को सफलतामय और सुखमय बना सकते हैं।

निश्चयात्मक विचारों का प्रभाव

निश्चयात्मक विचार से निर्माण-शक्ति का विकास होता है, जो कि अन्य सब मानसिक शक्तियों से विशेष महत्वपूर्ण है। यदि आपका मन निषेधात्मकप्र कृति की ओर झुक रहा है—यदि आपमें किसी कार्य्य के आरम्भ करने की शक्ति का अभाव है और आप चाहते हों कि हममें निर्माण—निर्मित शक्ति का विकास हो तो इसका अच्छा उपाय यही है कि आप अपने मन को उपरोक्त दुष्प्रकृति से हटा कर हर वस्तु की ओर निश्चयात्मक दृष्टि से देखिए—अपने मन को उत्पादक शक्ति की ओर झुकाइए। यह बात उस दशा में भी हो सकती है, जब आप वाह्य कार्य से निवृत्त हो कर आराम कर रहे हैं। निषेधात्मक विचार हमेशा कमजोरी को पैदा करने वाले हैं। सचमुच यह बहुत अच्छी बात है कि हम अपने मन को कुछ समय तक वाह्य प्रपंचों से निवृत्त रक्खा करें—समय समय

पर उसे आराम लेने दें। निषेधात्मक मन और निवृत्त मन में बड़ा फरक है। जहाँ निषेधात्मक मन दोषपूर्ण है, वहाँ निवृत्त मन निर्दोष है।

हम अपने मनोक्षेत्र में कैसे बीज बोते हैं, वैसे ही वृक्ष उगते हैं। यदि हम उसमें दुःख, दरिद्रता, द्रोह, वैर, विरोध के बीज बोयेंगे तो फल भी इन्हीं सा निकलेगा। और यदि हम उसमें सुख, संतोष, समृद्धि, ऐक्य, प्रेम दया और सहानुभूति के विचार बोयेंगे तो फल भी इन्हीं से मीठे और सुमधुर निकलेंगे।

विचार कर लो-मन वचन काया से इस बात को मान लो-कि अब भी हम वैसे ही मनुष्य हैं जैसे कि हम होना चाहते हैं; जैसा कि हमारा आदर्श है। हम कमजोर नहीं, निर्बल नहीं, दरिद्र नहीं, पर शक्तियुक्त समृद्धियुक्त और महान् आत्मा हैं। ऐसा करने से थोड़े ही दिनों में आपको मालूम होगा कि आपके आदर्शों की सिद्धि बड़ी शीघ्रता के साथ आपकी आत्मा में हो रही है-उन आदर्शों से आपका चरित्र परिपुष्ट हो रहा है।

हमें आवश्यकता है उन गुणों की जो हमें ऊँचा चढ़ावें और हमें आवश्यकता है उन गुणों की जो हमारी आत्मा में दिव्यता लावे। हमें आवश्यकता है उन गुणों की जो विकास पर दिव्य प्रकाश डालें। हमें आवश्यकता है उन गुणों की जो हमारी निर्माण-शक्ति को तेज करें और हमारी अकर्मण्यता और दुःख दारिद्र्यका नाश करें।

जिस समय भूमि की, वायुमण्डल की, सूर्य के प्रकाश की, और वर्षा की रासायनिक शक्ति पौधों और पेड़ों पर अपना रासायनिक प्रभाव डालना छोड़ देती है, तभी से उनके नाश का सूत्रपात होता है। उनमें वे नाशकारी कीटाणु घुसने लगते हैं जो उनके नाश के कारण होते हैं। इसी तरह मनुष्य में जब

उत्पादक शक्ति का—उस शक्ति का जो उसके आत्मा मन और शरीर को सुसङ्गठित करती है—आविर्भाव होना बन्द हो जाता है, तब उसकी दशा भी ठीक इन्हीं पौधों जैसी होने लगती है—नाशक तत्व उसको खाने लगते हैं।

जब मनुष्य अपने मन के भाव को सुनिश्चित कर लेता है, तब उसमें दूसरे लोगों की बुरी विचार-प्रेरणा से बचने की शक्ति आ जाती है। जैसे तुम किसी ऐसी स्थिति में रखे गये जहाँ तुम्हें बुरे विचार सुनने को मिलते हैं—चहुँ ओर से बुरे ही बुरे दृश्य तुम्हारी नजर में पड़ रहे हैं, ऐसी दशा में यदि तुमने अपने मन को उस शक्ति से सम्पन्न कर रखा हो जो तुम्हें इनके कुप्रभावों से बचाती रहे, तो तुम इनके विघातक पंजों से रक्षा पा सकते हो।

इसके विपरीत यदि हम अपने मनोभाव को बुराई के अनुकूल बनावें, यदि हम उसे बुराई का ग्राहक बनावें, यदि हम अपने मन से उसको प्रोत्साहन दें, उसका आदर करें, तो यह हम पर अपना ज़बरदस्त प्रभाव जमाना शुरू कर देगा।

यदि हम अपने मन को अपने उद्देश्य की ओर झुकाए रक्खें—यदि हम अपने जीवन-प्रवाह को और अपनी आत्मिक शक्तियों के स्रोत को अपने चरमोद्देश की ओर बहावें—तो हमें वह अलौकिक साधन प्राप्त होगा, जिससे हम अपने इष्ट की सिद्धि कर सकेंगे।

विरोध को उत्पन्न करनेवाला विचार हमारे परिश्रम को पंगु कर देता है। यदि हम कार्य्य-सम्पादन शक्ति को उत्पन्न करना चाहते हैं, तो हमें तल्लीनता, एकता, मानसिक-शान्ति और विचार-स्वातंत्र्य को उत्पन्न करना चाहिये। इसी बात को हम दूसरे शब्दों में यों कह सकते हैं कि हमारा विचार-प्रवाह

जीवन नाशक होने के बजाय जीवनप्रद होना चाहिये। वह मानसिक प्रवाह जो धैर्य्य से भरा हुआ है, आत्म-विश्वास से पूर्ण है, मानों विद्युत् शक्तियुक्त मानसिक बल है जो सफलता और विजय को हमारी ओर आकर्षित करता है।

बहुत से मनुष्य जो असफला और पराजय के पंजे में फँसे हुए हैं, वे आसानी से उससे अपने आपको मुक्त कर सकते हैं, यदि वे अपने मन से इस तरह के विचारों को हटा लें। अपने मन को भय, चिन्ता, दारिद्र्य, आधिव्याधि से साफ करना और उसे प्रबल, आशाजनक और उन्नति विचारों से भरना—यह भी एक उत्कृष्ट विद्या है।

हमारे मानसिक भावों का—हमारी आशाओं का—हमारी कीर्त्ति का, हमारी सफलता से, घनिष्ठ सम्बन्ध है। दूसरे लोग हमें कैसे गिनते हैं, इस बात से भी हमारी सफलता का सम्बन्ध है। यदि दूसरे मनुष्य हमारा विश्वास न करते हों—यदि वे हमें निर्बल और भीरु मानते हों—तो समझ लेना चाहिये कि हमारा मानसिक प्रकाश मन्द है—हमारी मानसिक शक्ति कमज़ोर और निर्बल है और हम महत्व के पद पर न पहुँच सकेंगे।

जो मनुष्य विजयी जीवन व्यतीत करता है—संसार में विजयी होकर घूमता है—उसमें और उस मनुष्य में जो दास होकर-परतन्त्र होकर-संसार मे रहता है, बड़ा फर्क है।

अमेरिका के भूतपूर्व प्रेसिडेन्ट थियेडर रुजवेल्ट जैसे महानुभावों की, जो चहुँ ओर अपनी शक्ति का प्रकाश फैलाते हैं, आप उन लोगों से तुलना करेंगे जो डरपोक हैं, निर्बल हैं, दासत्व भाव रखने वाले हैं, जिनका प्रभाव दुनिया पर बहुत कम पड़ता है, तो आपको दोनों का फर्क मालूम हो जायगा।

संसार उस मनुष्य का—उस वीर का—सम्मान करता है—आदर करता है—पूजा करता है जो दास नहीं पर विजयी होकर निकलता है; जो दुनिया को इस बात का विश्वास करा देता है कि विजय अवश्यम्भावी है।

अपनी शक्ति पर विश्वास लाना ही संसार में उसका प्रकाश करना है। यदि तुम्हारे मानसिक भाव में शक्ति की स्फूर्ति नही होती है तो दुनियाँ तुम्हें शक्तिशाली के पद से सम्मानित नही करती है।

कुछ लोगों को इस बात का आश्चर्य होता है कि समाज में वे इतने तुच्छ क्यों गिने जा रहे हैं, क्यों उनका महत्व नहीं बढ़ता? इसका कारण यही है कि वे अपने आपको विजयी नही मानते, न विजयी सा आचरण ही करते हैं।

वे अपने मन में विजय के उत्साही विचारों का प्रवाह नहीं बहाते। वे हमेशा निर्बलता ही के भाव को उत्पन्न करते है। वहाँ तक कोई मनुष्य प्रभावशाली नहीं हो सकता जहाँ तक कि शक्ति के रहस्य का वह ज्ञान प्राप्त न कर ले। निश्चयात्मक प्रकृतियुक्त मनुष्य ही प्रभावशाली हो सकते हैं। वीरों ने पहले मानसिक विजय प्राप्त की है और फिर सांसारिक।

हमें चाहिये कि हम अपने बच्चों के मन को विजय के विचारो से भर दें। उन्हें समझा दें कि तुम्हारा जीवन ही विजय के लिये है—जीवन सफलता प्राप्त करने के लिये है। हमें उन्हें समझा देना चाहिये कि विजयी को ही संसार में स्थान मिलता है। विजयी ही की धाक से संसार में बड़े बड़े परिवर्तन हो जाते है। इसके विपरीत निर्बल को संसार में स्थान नही मिलता, अत्याचारों से बचने की शक्ति न होने के कारण उस पर बड़े बड़े अत्याचार होते हैं। जगह जगह

वह लात खाता है, घोर अपमान सहता है। अथवा दूसरे शब्दों में यों कह सकते है कि विजय ही जीवन है और पराजय मृत्यु।

युवा पुरुष को संसार में प्रवेश करते समय यों नहीं कहना चाहिये कि 'मैं विजय—सफलता—प्राप्त करना चाहता हूँ। पर मुझे अभी यह विश्वास नहीं है कि मैं उनके लिये कहाँ तक योग्य हूँ। जिस व्यवसाय में लगा हुआ हूँ, उसमें पहले ही इतने लोग लगे हुए है कि उन्हें ही पूरा खाने को नहीं मिलता। बहुत से लोग बेकार हो रहे है। मैं समझता हूँ कि मैंने सख़्त गलती की है। पर मैं शक्तिभर अपने कार्य्य को अच्छा करने की कोशिश करूँगा, कुछ तो अच्छा बुरा फल निकलेहीगा।"

सच बात यह है कि लोग, जो कुछ हम है, उसी से हमारा वज़न गिनते है न कि जो कुछ हम कहते हैं उससे। हमें अपने सत्य पर प्रकाश डालना चाहिये। हम मन-चाही बातें बना सकते है, पर जो कुछ हमारे मानसिक प्रकाश की प्रभा उन पर गिरेगी, उसी से वे हमारे प्रभाव की कीमत करेंगे, क्योंकि यही हमारा सत्य है। चाहे तुम कितनी ही चिकनी चुपड़ी बातें बनाओ, पर इससे तुम अपने विषय में दूसरे मनुष्य के विचारों में परिवर्तन नही कर सकते। यदि तुम्हारे हृदय में द्वेष और प्रतिहिंसा के विचार गूँज रहे है—यदि तुम्हारा अन्तःकरण पर जलन से जल रहा है, यदि तुम्हारे मन में निर्दयता घुसी हुई है तो दूसरे मनुष्य को तुम्हारे मन के ये सब कुभाव फौरन मालूम हो जावेंगे। हम अपने शब्दों से दूसरों को धोखा दे सकते है, पर तब तक हम अपनी मानसिक प्रभा को नहीं बदल सकते जब तक कि हम अपना सारा ही मानसिक भाव न बदल डाले।

ज़रा उस मनुष्य की शोचनीय दशा की ओर आँख उठाकर देखिये जो यों कहता रहता है "हे समृद्धि ! तू मुझसे दूर रह। मेरे पास मत आ। अवश्य ही मैं तुझे प्राप्त करना चाहता हूँ, पर ईश्वर ने तुझे मेरे लिये नहीं सृजा। मेरा जीवन बहुत ही लाचार है। यद्यपि मैं चाहता हूँ कि मुझे भी वे सब अच्छी वस्तुएँ प्राप्त हों, जो भाग्यवान् को प्राप्त हैं, पर मैं आशा नहीं करता कि वे मुझे प्राप्त होंगी।"

जिस मनुष्य के इस तरह के विचार होते हैं, समृद्धि और ऐश्वर्य्य उसके पास फटकते तक नहीं। जिनके मन में भय और संशय रहता है वहाँ ऐश्वर्य्य का प्रवेश नहीं हो सकता।

पर समय आ रहा है जब कि हम लोग उत्पादक शक्ति से अपने मन को भर देंगे और तब हमारा जीवन ऐश्वर्य्य से परिपूर्ण हो जायगा।

आत्म-विश्वास

वह पशुपालक सफलता मिलने की कैसे आशा कर सकता है, जो भयङ्कर और जंगली जानवर के पींजरे में शुरू ही मे भय और संदिग्ध मन से प्रवेश करता है। कोई यों सोचता हुआ पिंजरे में घुसता है कि "मै इन जंगली जानवरों को वश में लाने की कोशिश करूँगा, पर निश्चय रूप से यह विश्वास नही करता कि वास्तव में मैं ऐसा कर सकूँगा। अफ्रिका के जंगलों से जंगली शेर को पकड़ लाने की कोशिश करना, मनुष्य के लिये घातक कही जाय तो अतिशयोक्ति न होगी। हाँ, ऐसे मनुष्य हैं जो ऐसे भयङ्कर कार्य्य को कर सकते है, पर मुझे सन्देह है कि शायद ही मैं ऐसे काम में सफलता प्राप्त कर सकूँ।"

यदि मनुष्य इस प्रकार के निर्बल, संदिग्ध और भयपूर्ण विचारों से जंगली जानवर का सामना करे तो इसमे तनिक मात्र भी सन्देह नही कि वह जानवर उसकी हड्डी हड्डी को चवा जायगा। ऐसे समय में तो अविचल साहस और धैर्य ही उसकी रक्षा कर सकते है। ऐसे मनुष्य को चाहिये कि पहले उसे अपनी आँख से वश में लावे। आँख में उसके वह भाव झलकना चाहिये जो चित्ताकर्षक-हृदय ग्राही, निडर और निश्चयात्मक हो, क्योंकि जहाँ उसकी आँख में ज़रा भी भय का, भीरुता का भाव झलका कि समझ लीजिये उसकी जान गयी।

इसी प्रकार जीवन-संसार में मनुष्य तब तक सफलता—विजय प्राप्त नहीं कर सकता, जब तक कि उसके मन में यह विश्वास न हो ले कि जिसके लिये मैं काम कर रहा हूँ उसे मैं प्राप्त करता जा रहा हूँ।

हम व्यापार में प्रवेश करने की इच्छा रखनेवाले उस नवयुवा से सफलता की किस प्रकार आशा रख सकते हैं जिसका शुरू ही में ऐसा संदिग्ध मन होता है कि "मैं व्यापार में सफलता प्राप्त कर सकूँगा या नहीं" कभी किसी तरह किसी को सफलता प्राप्त नहीं हो सकती, जब तक कि सफलता पर उसका हार्दिक विश्वास न हो ले—जब तक कि उसका यह दृढ़ निश्चय न हो ले कि एक दिन मैं बहुत बड़ा व्यापारी हो जाऊँगा। मनुष्य उसी काम को ठीक तरह कर सकता है—उसी में सफलता प्राप्त कर सकता है—जिसकी सिद्धि में उसका हार्दिक विश्वास है।

वह नवयुवा कैसे धनवान हो सकता है, जिसका विश्वास नहीं है कि मैं धन पैदा कर सकूँगा, जो ऐसा मानता है कि थोड़े ही मनुष्यों के भाग्य में धन बदा है, ज्यादा आदमी गरीब रहते हैं और मैं उनमें से एक हूँ।

वह मनुष्य कैसे विद्या प्राप्त कर सकता है, जिसकी दृष्टि में निराशा का भाव छाया हुआ है—जो हमेशा यों झींखा करता है कि "हाय! क्या करूँ? मैं चाहता हूँ कि मैं लिखूँ पढ़ूँ। पर परमात्मा ने मुझे निःसहाय उत्पन्न किया है, मुझे किसी तरह का सुभीता नहीं है, न मेरे पास पैसा है और न मेरा कोई सहायक ही है। ऐसी बुरी स्थिति के कारण मैं लाचार हो रहा हूँ। इसी से विद्या—शिक्षा—प्राप्ति के द्वार मेरे लिये बन्द हो गये हैं।"

वह युवा किस तरह ऊँचे पद पर पहुँच सकता है, जिसका ऐसा ख्याल है कि मैं उक्त पद के योग्य नहीं हूँ।

मैंने बहुत से ऐसे नवयुवाओं को देखा है, जिनमें कोई वकील, कोई वैद्य और कोई व्यापारी होना चाहता था। पर उनकी इच्छा-शक्ति इतनी निर्बल थी, उनका निश्चय इतना ढीला था, कि पहली कठिनाई ही ने उन्हें अपने उद्देश्य से चल-विचल कर दिया—उनके पैर फिसला दिये। ये अपने काम को ठीक तरह शुरू भी न करने पाये थे कि निर्बल निश्चय ने उन्हें उससे अलग कर दिया। मैं कहता हूँ कि उनका दिशा बदलने में एक छोटी सी चीज़ ने कमाल किया।

मै ऐसे भी बहुत से नवयुवाओं को जानता हूँ कि जिन्होंने अपने व्यवसाय को निश्चित करने में इतने उत्साह और शक्ति से काम लिया था कि कोई उन्हें अपने उद्देश से हटा न सका। क्योंकि उन्होंने मन, वचन और काया से इस बात को मान लिया था कि हमारा उद्देश हमसे अलग नहो। वह हमारे शरीर का एक विशेष और महत्त्वपूर्ण अंग है। यदि हम अविचल साहस द्वारा सम्पादित किये हुये उन बड़े बड़े कार्य्यों का उनके कर्त्ताओं से विश्लेषण करें, तो आत्मविश्वास ही सब से प्रधान गुण निकलेगा। वह मनुष्य अवश्य ही सफलता प्राप्त करेगा—आगे बढ़ेगा—ऊँचा उठेगा—उन्नति-पथ पर अग्रसर होगा, जिसको अपनी कार्य्य सम्पादन शक्ति पर विश्वास है—जो मानता है कि मुझ में वह योग्यता है, जिससे मैं उस कार्य्य को अवश्य ही पूरा कर सकूँगा, जिसको मैंने हाथ में उठाया है। इस तरह के विश्वास का कार्य्यकर और मानसिक परिणाम केवल उन्हीं लोगो पर नहीं होता जो ऐसा विश्वास रखते

हैं, पर उन लोगों पर भी होता है जो उनके पास उठते बैठते हैं तथा उनसे सम्बन्ध रखते हैं।

जब मनुष्य को मालूम होने लगता है कि मैं प्रभुता प्राप्त करता जा रहा हूँ—ऊँचा उठता जा रहा हूँ—तब ही वह आत्म-विश्वास-पूर्ण बातें करने लगता है, तब ही वह अपनी विजय पर प्रकाश डालता है, तब ही वह भय और शंका पर जय प्राप्त करता है। संसार, विजयी पर विश्वास लाता है। संसार उस मनुष्य का विश्वास करता है. चिसके चेहरे पर विजय के भाव झलकते हैं।

हम उन लोगों का स्वभाव ही से विश्वास करने लगते है, जो अपनी शक्ति का प्रभाव हम पर डालते हैं। विना आत्म-विश्वास के वे ऐसा नहीं कर सकते। वे उस हालत में हम पर प्रभाव नहीं डाल सकते, जब कि उनका मन, भय और शंकाओं से भरा हुआ रहता है। कुछ मनुष्यों में कुछ ऐसी अलौकिक शक्ति होती है कि उनके दर्शन मात्र से ही हमारे हृदय पर अपने आप उनका आध्यात्मिक प्रभाव पड़ने लगता है। हमें उनमें एक अद्भुत प्रकार की दिव्यता दीखने लगती है। वे हमारे विश्वास को अपनी ओर खींच लेते हैं। हम उनकी शक्ति पर विश्वास करने लगते हैं। ऐसा क्यों न हो, जब कि वे अपनी शक्ति पर निरन्तर दिव्य प्रकाश डाला करते हैं—उसे अधिकाधिक उज्ज्वल बनाते रहते हैं।

आपने अवश्य ही बहुत ऐसे लड़कों को देखा होगा जो शिक्षा और योग्यता के लिहाज से समान होते हुए भी कोई तो अपने उद्देश्य की ओर वीरता और धीरता पूर्वक पैर उठाते जाते हैं और कोई इसी बात की प्रतीक्षा करते रहते हैं कि कोई अन्य मनुष्य हमारे लिये मार्ग ढूँढ दे। आप जानते हैं कि

दुनियाँ को इस बात की फुरसत नहीं है कि वह आपकी योग्यता की ओर ताका करे, वह देखेगी इस बात को कि आप अपने उद्देश्य की ओर किस गति से जा रहे हैं।

जितना आप अपनी योग्यता पर अविश्वास करेंगे, जितना आप भय और शङ्का को अपने हृदय में स्थान देंगे, उतने ही आप विजय से—सफलता से दूर रहेंगे। चाहे हमारा पथ कितना ही कंटकाकीर्ण और अन्धकारमय क्यों न हो, पर हमें चाहिये कि हम कभी अपने आत्म-विश्वास को—मानसिक धैर्य्य को-तिलांजलि न दें। हमारी शकाएँ और भय जैसे दूसरों के विश्वास को नष्ट करते हैं, वैसे अन्य कोई पदार्थ नही। बहुत से मनुष्यों की असफलता का कारण यह है कि वे अपने निराशाजनित भाव ही को प्रोत्साहन देते रहते हैं और अपने पास उठने बैठनेवाले लोगों से ऐसी ही निराशामय प्रेरणा किया करते हैं।

यदि तुम अपने आपको पतित समझोगे - यदि तुम समझोगे कि हम सामर्थ्य हीन मनुष्य हैं—हमारा कोई महत्व नहीं—तो दुनियाँ तुम्हें ऐसा ही समझेगी, वह तुम्हारा कोई महत्व नही समझेगी। वह तुम्हारी आवाज की कुछ कीमत न गिनेगी।

मैंने कोई ऐसा आदमी नहीं देखा जिसने अपने आपको तुच्छ, हीन और वेकाम समझते हुए कोई महान् कार्य किया हो। जितनी योग्यता का हम अपने आपको समझेंगे उतना ही महत्वपूर्ण काम कर सकेंगे।

यदि आप बड़े बड़े पदार्थों की आशा करते हैं—उनकी मांग करते है-और अपने मनोभाव को विशाल बनाए हुये हैं तो आपको बड़ी ही उँचे दर्जे की सफलता प्राप्त होगी।

जैसे तुम अपने आप को गिनोगे, जैसे तुम्हें अपनी योग्यता पर विश्वास होगा, जैसे तुम्हें अपनी उन्नति का महत्व मालूम हो रहा होगा—तुम संसार के लिये अपने आपको जैसे उपयोगी और वज़नदार गिनोगे, वैसा ही भाव तुम्हारे चेहरे पर और तुम्हारे आचार-विचार पर दीखने लगेगा।

यदि तुम अपने आप को मामूली आदमी मानोगे तो तुम्हारे चेहरे पर भी ऐसा ही भाव दीखने लगेगा। यदि तुम अपने आप का सम्मान न करोगे तो तुम्हारा चेहरा इस बात की गवाही दे देगा। यदि तुम अपने आप को ग़रीब और नाचीज़ समझोगे तो खूब समझ लो तुम्हारे चेहरे पर कभी भाग्यवानों की प्रभा न चमकेगी—गरीबी ही की झलक तुम पर झलका करेगी। जो कुछ गुण तुम अपने आप में प्रकट करते हो उनका अंश उस प्रभाव में भी रहता है जो तुम दूसरों पर डालते हो।

जिन गुणों को आप प्राप्त करना चाहते हो उन्हीं गुणों को यदि आप अपने मानसिक भवन में पैदा करते रहोगे तो धीरे धीरे ये गुण आप के होने लगेंगे और इनका प्रकाश आप के चेहरे पर भी चमकने लगेगा। यदि आप चाहते हैं कि हमारे मुख-मण्डल पर दिव्यता का भाव झलके तो पहले आप अपने हृदय में वैसे भावों को उत्पन्न कीजिये। यदि आप चाहते हों कि हमारे मुख-मण्डल और आचार-व्यवहार में उच्चता का भाव झलके तो इसके लिये आवश्यक है कि आप अपने विचारों में उच्चता लावें।

हमारे कार्य की नीव हमारे आत्म-विश्वास पर लगी हुई है। 'हम कार्य्य कर सकते हैं" इस विचार में बड़ी अद्भुत शक्ति भरी हुई है।

जिस मनुष्य में पूरा आत्म-विश्वास है वह इस तरह की गड़बडी में नहीं पड़ता कि मैं ठीक पथ पर हूँ कि नहीं, मुझ में कार्य्य-सम्पादन की योग्यता है कि नहीं। उसे अपने भविष्य के लिये किसी प्रकार की चिन्ता नहीं रहती।

जो मनुष्य आत्म-विश्वास से सुरक्षित है, वह उन चिंताओं एवं फिक्रों से बरी रहता है, जिनसे दूसरे मनुष्य बहुत दबे हुए रहते है। उसके विचार और कार्य्य उक्त बलाओं से मुक्त होकर स्वाधीनता प्राप्त करते है। अथवा दूसरे शब्दों में यों कहिये कि उसे कार्य्य और विचार की स्वाधीनता मिल जाती है, जो उच्च कार्य सम्पादन-शक्ति की प्राप्ति के लिये बहुत आवश्यक है।

किसी महान् साहसिक कार्य्य के लिये स्वाधीनता की बडी ही ज़रूरत है। जिस मनुष्य का मन भय, चिन्ता, और शङ्का से तलमला रहा है, वह कभी कोई महान् कार्य्य नही कर सकता। प्रभावशाली मस्तिष्ककार्य के लिये पूर्ण स्वाधीनता की बडी आवश्यकता है। शङ्का और सन्देह हमारी मानसिक एकाग्रता में बाधक होते है—जो एकाग्रता की हमारी कार्य्यकारिणी शक्ति का रहस्य है। आत्म विश्वास—आत्म श्रद्धा किसी भी कार्य का मूल है। जीवन व्यवसाय की प्रत्येक शाखा मे इससे अद्भुत प्रकाश गिरता है। जिस आत्म-विश्वास—आत्मश्रद्धा के—द्वारा मनुष्यों ने वड़े वड़े साहसिक कार्य किये है, बड़ी बड़ी विघ्नबाधाओं का सामना कर उन पर विजय प्राप्त की है, जिसके द्वारा मनुष्यों ने विपत्तियों के पहाड़ों को तोड़ डाला है उस विश्वास में कितनी अद्भुत शक्ति भरी हुई है, इसका अनुमान कौन लगा सकता है?

विश्वास ही से हम अपनी शक्ति को दूना कर लेते हैं और अपनी योग्यता को बढ़ा लेते हैं।

एक हट्टे कट्टे और मजबूत मनुष्य में से जब आत्म-विश्वास उठने लगता है तभी से उसके पैर फिसलने शुरू हो जाते हैं। विश्वास ही वह चीज़ है, जो हमें उस दिव्यता का दर्शन कराता है जो हमारे भीतर भरी हुई है। विश्वास ही वह पदार्थ है जो ईश्वर से हमारा ऐक्य सम्बन्ध कराता है। विश्वास ही वह पदार्थ है जो हमारे हृदय-कपाटों को खोल देता है, और विश्वास ही वह चीज़ है कि अनन्त से मिला देता है जिससे अनन्त शक्ति, अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शनों का हमें अनुभव होने लगता है। हमारा जीवन महान् है कि साधारण, उच्च है कि शुद्ध, यह बात हमारी अन्तरदृष्टि और विश्वास की शक्ति पर निर्भर है। बहुत से मनुष्य अपने विश्वास और श्रद्धा पर विश्वास नहीं लाते, क्योंकि वे इस बात को नहीं जानते कि वह क्या वस्तु है। वह यह नहीं जानते कि विश्वास ही हमारी अन्तरात्मा की ध्वनि है। यह एक आध्यात्मिक कार्य्य-शक्ति है। यह एक ज्ञान है जो उतना ही सच्चा है जितना इन्द्रियों द्वारा प्राप्त किया हुआ ज्ञान। विश्वास व श्रद्धा हमारे चित्त को ऊँचा उठानेवाले है। इन्हीं का अद्भुत प्रभाव हमारे आदर्श पर गिरता है। ये हमें ऊँचा उठाते हैं और उस दिव्यता—सफलता के दर्शन कराते हैं जिनके लिये ये हमारी आत्म-प्रतीति करा रहे थे। ये ही सत्य और बुद्धि के प्रकाश हैं। मेरी समझ में बच्चों को आत्म-विश्वास से हटाना और उन्हें यह कहना कि तुम्हारा कोई महत्व नहीं—तुम नाचीज़ हो—तुम वह नहीं कर सकते—यह भी एक अपराध है।

माता पिता और अध्यापकगण इस बात को बहुत कम

जानते हैं कि बच्चों का मन कितना कोमल होता है और उनके सामने इस तरह के साहसहीन वचनों के कहने से उन पर कितना बुरा प्रभाव पड़ता है। मैं निश्चयपूर्वक कहता हूँ कि संसार में जो दुःख, दरिद्रता और असफलता दीख रही है वह अधिकांश में हीन प्रेरणाओं ही का फल है। डाक्टर ल्यूथी जो न्यूयार्क की पाठशालाओं के फिजिकल डाइरेक्टर हैं, कहते हैं कि "हमारी पब्लिक पाठशालाओं के बहुत से विद्यार्थी परीक्षा में अनुत्तीर्ण हो जाने के सदमे से अकाल ही में काल के ग्रास बन जाते हैं। परीक्षा में अनुत्तीर्ण होने का कारण आँखों की कमजोरी, खराब दाँत, पौष्टिक भोजन न मिलना बताया जाता है। बच्चे हमारे कहे हुये मार्ग पर नहीं चलते। वे यह नहीं जानते कि हम क्यों इतने अपूर्ण हैं? वे तो अपनी असफलता से दुःखी व उदास हो जाते हैं। उनका साहस टूट जाता है, उनका मन बेतौल हो जाता है। हर साल में इसी कारण बहुत से विद्यार्थी आत्म-हत्या कर लेते हैं।" लड़के ही क्यों! विश्वास-पतन का बुरा फल जानवरों तक पर गिरता है। वह घोड़ा जो दौड़ की शर्त में सब से आगे निकलने वाला है कभी शर्त का इनाम न पायगा यदि उसका विश्वास नष्ट कर दिया जायगा—शाबाशी के शब्दों से उसे आश्वासन न दिया जायगा। जो लोग घोड़े आदि जानवरों को पालते हैं सब से पहिले उन्हें यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि वे हमेशा उनके विश्वास को बढ़ाते रहें। विश्वास ही से हमारी शक्ति का विकास होता है। विश्वास ही से हमें वह क्षमता प्राप्त होती है, जिससे हम अपनी योग्यता को बढ़ा सकें। इसी से समय समय पर बड़े बड़े चमत्कारिक कार्य्य हुए हैं। जो कोई तुम्हारे आत्म-विश्वास को बढ़ाता है वही मानो तुम्हारी शक्ति को बढ़ाता है।

संसार में जो मनुष्य बड़े बड़े काम करते हैं, उन सब में ऊँचे दर्जे का आत्म विश्वास होता है। अपनी शक्ति पर, अपनी योग्यता पर, अपने कार्य्य पर, बल पर, उनका पूरा पूरा विश्वास होता है।

हमें चहिये कि हम निरन्तर अपने आत्म-विश्वास पर जमे रहें, उसे किसी तरह ढोला और कमजोर न होने दें। हमें इस बात का पूरा पूरा आत्म विश्वास होना चाहिये कि जो जो कार्य्य हमने हाथ में पकड़े हैं, उसे हम अवश्य ही पूरा करेंगे-उसे अवश्य ही हम अन्त तक पहुँचावेंगे। संसार में जिन लोगों ने बड़े बड़े अद्भुत कार्य्य किये हैं, आत्म-विश्वास ही के तत्व को पकड़ कर वे चले हैं। यदि आप संसारके उन महान् पुरुषों की जीवनी का अवलोकन करेंगे, जिन्होंने संसार की सभ्यता को ऊँचा चढ़ाया है, तो आपको मालूम होगा कि उन्होंने जिस समय अपने कार्य्य का आरम्भ किया था, उस समय वे बहुत गरीब थे और बहुत वर्ष उनके लिये इतने अन्धकारमय गुजरे कि उनमें उन्हें अपनी सफलता का कोई भी चिन्ह न दीख पड़ा। पर वे इस दृढ़ विश्वास के साथ काम करते रहे कि कभी न कभी हमें अवश्य सफलता प्राप्त होगी—हमारे मार्ग पर प्रकाश गिरेगा। इसी तरह के आशामय और विश्वासपूर्ण विचार से कैसे २ अद्भुत आविष्कार आविष्कृत हुए है? क्या आप जानते हैं कि पहले इन आविष्कारों के कर्ताओं को कैसी कैसी मुसीबतों का सामना करना पड़ा है? क्या आपको यह मालूम है कि बहुत वर्ष तक उन्हें सफलता का कोई चिन्ह हो न दीख पड़ा, बहुत वर्ष उनके लिये अन्धकारमय गुजरे, पर उन्होंने अपनी आशा को नहीं छोड़ा, विश्वास को तिलांजलि न दी और अपने मनादेश पर दृढ़ता-

पूर्वक जमे रहे। अन्त में उन्हें प्रकाश मिला। वे सफल हुए। वर्षों का परिश्रम सफलीभूत हुआ। यदि वे अपनी आशा को छोड़ देते तो उन्हें यह प्रकाश कभी नही मिलता। कभी वे अद्भुत अद्भुत आविष्कार कर संसार को अचम्भे में न डाल पाते।

यह उन्हीं महान् आत्माओं का प्रताप है कि आज हम तरह तरह के आराम भोग रहे हैं, बिना तकलीफ के घंटों में सैकड़ों मील चले जाते हैं, आकाश की हवा खा लेते है, अपने इष्ट मित्रों के पास मिनटों में सुख वा दुःख का सदेशा भेज सकते हैं। इस महान् आत्माओं के पथ में विपत्ति के पहाड़ के पहाड़ आये, पर उन्होंने वीरतापूर्वक उन्हें तोड डाला। इन्हें निरुत्साह करने में—अपने पथ से च्युत करने में—लोगों ने कोई बात उठा न रखी, पर उन्होंने किसी की बात पर कान न दिया। वे अपने मार्ग पर आगे बढ़ते ही गये, और बिना किसी की सहायता और सहानुभूति के उन्होंने वह अद्भुत काम किया जिसे देख कर दुनिया दंग रह गई।

हर काम उसी दशा में अच्छा होता है, जब कि विश्वास का प्राधान्य रहता है। विश्वास ही हमें उस मार्ग को बताता है जो हमें अपने संभाव्य तक पहुँचा देता है। विश्वास ही कार्य्य का बल है। वह हमें हाथ में बड़े कार्य्य उठाने से नहीं रोकता, क्योंकि हम में वह शक्ति का एक ऐसा झरना देखता है, जिसके द्वारा सब कुछ कार्य हो सकता है।

आज तक कोई मनुष्य विश्वास के तत्व को ठीक तरह समझ न सका। वह क्या वस्तु है जो मनुष्य को अपने कार्य्य पर दृढ़ता पूर्वक जमा लेती है? वह क्या पदार्थ है जिससे मनुष्य निराशामय अन्धकार में रहते हुए भी आशा के प्रकाश

की झलक देखा करता है ? वह क्या पदार्थ है जो मनुष्य को विपत्ति सहने में धैर्य्य देता है ? वह क्या पदार्थ है, जो दुःख में भी मनुष्य को आनन्द के सुख-स्वप्न दिखाता है ? वह क्या पदार्थ है जो दरिद्रता के पंजे में फँसे हुए मनुष्य को आश्वासन देता रहता है ? वह क्या पदार्थ है जो मनुष्य के हृदय को उस समय छिन्नभिन्न होने से बचाता है जब कि वह कौड़ी कौड़ी से मुहताज हो जाता है, और उसके इष्ट मित्र तक उसकी ओर से मुँह मोड़ लेते हैं ? वह क्या पदार्थ है जो लाखों विपत्तियों के गिरने पर भी धीरतापूर्वक खड़ा रहने का उसे बल देता है ? दुनिया उन वीरों की ओर देख कर दंग रह जाती है, जिन्होंने दुनियां में सब कुछ खो दिया है, पर उस विश्वास को मजबूती से पकड़े हुए हैं कि हम उस कार्य्य को अवश्यमेव पूर्ण करेंगे, जिस पर हमने अपना अन्तःकरण लगाया है।

विश्वास ही वह चीज है, जो हमें ज़ोर से कहती है कि अपने कार्य्य की ओर पैर उठा दो। वही हमारी आत्मा—इन्द्रिय है, वही हमारी आध्यात्मिक अन्तर्दृष्टि है, वही हमारे मार्ग का पथ-प्रदर्शक है, वही हमारी विघ्न—बाधाओं पर जय प्राप्त कर हमारे पथ को साफ करती है।

दुनिया में जो बड़े बड़े आविष्कार हुए हैं—नयी नयी बातें निकली हैं—अद्भुत कार्य्य हो रहे हैं—सब विश्वास ही के फल हैं।

उस नवयुवक के भविष्य की कुछ चिन्ता नहीं जिसके हृदय में विश्वास ने जड़ पकड़ ली है। आत्म-विश्वास में वह ताकत है जो हज़ार विपत्तियों का सामना कर उन पर पूरा पूरा विजय प्राप्त कर सकती है। यही गरीब मनुष्य का मित्र

है और यही उसकी सबसे अच्छी पूँजी है। हमने देखा है कि द्रव्यहीन पर आत्म-विश्वासी मनुष्यों ने दुनिया में गज़ब के काम किये हैं, जब कि बहुत से धनवान् मनुष्य विश्वासहीनता के कारण बडी बुरी तरह असफल हुए हैं, वे कोई मार्के का काम नही कर सके है। यदि हमें विश्वास है कि हम बड़े बड़े कार्य्य कर सकेंगे, दुनिया को फेर देंगे, हम बहुत कुछ कर सकेंगे—यदि हमें इस बात का विश्वास होगा कि हम में एक दैवी तत्व मौजूद है—ईश्वर ने हममें कोई नीच तत्व नही रक्खा है—हम में पूर्णता भरी हुई है—तो हमारे हाथ से दुनियाँ के बड़े बड़े कार्य्य होंगे।

जब कि मनुष्य राजकुमार है अर्थात् राज राजेश्वर ईश्वर का पुत्र है, जब कि दैवी रक्त उसके नस नस में बह रहा है; जब कि वह दैवी सम्पत्ति का उत्तराधिकारी है, तो क्यों न उसे अपने इस जन्मसिद्ध अधिकार पर धैर्य्य और विश्वास-पूर्वक दावा करना चाहिये ?

बात यह है कि हम लोग अपने सद्गुणों को पूरी तरह नज़र में नहीं रखते। इसीसे हम उसका ठीक विकास नही कर सकते। इसीसे दैवी भाव हमारे चेहरे पर नही झलकता।

हम देखते हैं कि बहुत से मनुष्य सदा ही गरीब ही बने रहते हैं, समाज में सम्मान प्राप्त नहीं कर सकते। इसका कारण यही है कि वे अपने आपको हीन समझते है—उन्हें उन सद्-गुणों की पहचान नही होती—जो उनकी आत्मा में रहे हुए है। यदि आप भारत की नीच जातियों पर दृष्टि डालेंगे तो आपको मालूम होगा कि शताब्दियों से नीच वातावरण में पलने कारण वे इस बात को साफ भूले हुए है कि हम भी मनुष्य हैं—हम में भी वे ही दिव्य गुण मौजूद हैं, जो अन्य

मनुष्यों में हैं। हममें भी वही शक्ति है जो दुनिया के बड़े बड़े काम कर सकती है—हम भी मनुष्य होने के कारण वे ही अधिकार रखते हैं जो अन्य मनुष्य भोग रहे हैं और आत्म-गौरव—आत्म-सम्मान के—हम भी वैसे ही पात्र हैं जैसे अन्य मनुष्य।

वे समझे हुए हैं कि ईश्वर ने हमें जन्म से ही ऐसा दीन बनाया है। हमारी योनी नीच रक्खी है, पर वे इस बात को नहीं जानते कि ईश्वर की नज़र में मनुष्य मात्र एकसा है। मनुष्य जैसा कर्म करता है, वैसा ही वह बन जाता है। हर मनुष्य को अच्छे कर्म कर ऊँचा उठने का अधिकार है। पर ये बेचारे शताब्दियों से अत्याचार सहते आए हैं। अतएव वे मनुष्योचित अधिकारों को भूल गए हैं। वे ईश्वर ही को दोष देकर बैठ जाते हैं। ऊँचा उठने का प्रयत्न नहीं करते, अतएव हमेशा हीन दशा में ही पड़े रहते हैं। इन पंक्तियों के लेखक ने बड़ौदे में अपनी आँखों देखा है कि बहुत से धेढ़, चमार, भङ्गी, जो पशुओं से भी बदतर समझे जाते थे, शिक्षित होकर अपने आत्म गौरव को समझने लगे हैं। वे अब इस बात को मानने लगे हैं कि हमें भी ऊँचा उठने का हर हालत में हक़ है। इसी से बड़े बड़े ओहदों पर काम कर रहे हैं। इन्होंने अपने आपको नीच समझना छोड़ दिया। कई लोगों ने अपनी अद्भुत प्रतिभा का परिचय देकर डंके की चोट इस बात को सिद्ध कर दिया है कि बुद्धि और प्रतिभा के—ठेकेदार केवल ब्राह्मणादि उच्च जातिवाले ही नहीं हैं। अन्य में भी वह वैसे ही विकसित हो सकती है जैसे ब्राह्मणों में। शीघ्र ही वह दिन आने वाला है—शीघ्र ही वह प्रभात होने वाला है, जब इन हीन माने जानेवाले अत्याचार-पीड़ित मनुष्यों के अलौकिक

प्रकाश की ओर सारा जगत् टकटकी लगाकर देखेगा और अपने किये हुए अत्याचार पर पश्चात्ताप करेगा। देर केवल इस बात की है कि वे अपने को मनुष्य ख़याल करने लगें।

आत्मविश्वास और सफलता

चाहे हम इस बात को मानें या न मानें, पर यह बात सच है कि हम अपने आत्म-विश्वास से पृथक् नहीं हो सकते। जैसा हमारा आत्म-विश्वास है उससे बढ़कर हम कोई कार्य्य नहीं कर सकते।

यदि हम अपने आत्म-विश्वास को दृढ़ करते रहें—यदि हम इस बात को मानते रहें कि हममें ऊँची शक्ति और योग्यता मौजूद है, तो इससे हमारी मानसिक शक्तियों पर बड़ा ही उदार और दिव्य प्रभाव पड़ेगा।

यदि मनुष्यों में सबसे ज़्यादा किसी बात की कमी है तो वह आत्म-विश्वास ही की है।

बहुत से मनुष्य ऐसे पाये जाते हैं कि जहाँ उनमें दूसरी शक्तियाँ बहुतायत से मिलती हैं, वहाँ आत्म-विश्वास की उनमें बड़ी ही कमी रहती है। बहुत से मनुष्य जो असफल हो रहे है, वे फिर सफलता प्राप्त कर सकते हैं यदि वे अपनी इस शक्ति को ठीक तरह संस्कृत और प्रबल करें।

आप किसी डरपोक, शङ्काशील मनुष्य को पास बैठा कर हमेशा यह पाठ पढ़ाइए कि "तुम अपनी आत्मा में विश्वास करना सीखो। तुम में वह शक्ति मौजूद है जो दुनिया के बड़े बड़े काम कर सकती है। तुममें वह योग्यता मौजूद है, जिससे समाज में तुम अपना वज़न उत्पन्न कर सकते हो।" आप उसके आत्म-विश्वास को इस तरह पुष्ट करते रहो फिर आप-

को यह बात मालूम होने लगेगी कि उसका साहस किस तेज़ी से बढ़ रहा है—उसकी मानसिक शक्तियों में किस तरह नया जीवन आ रहा है।

जैसे हम अपने आपको मानेंगे वैसा ही आदर्श हमारी आत्मा का बनेगा। हो नहीं सकता कि जैसा हम अपने आपको मानते है उससे हम ज्यादा बड़े आदमी बन जावें। यदि किसी प्रतिभाशाली मनुष्य को भी यह विश्वास करा दिया जाय कि वह अति क्षुद्र है, नाकुछ है तो उसकी गति भी नीचता—क्षुद्रता की ओर होने लगेगी। तब तक वह गिरता ही जायगा, जबतक कि वह फिर अपने आपको बलवान न गिनने लगे, जबतक कि वह अपने आपको बड़ा न मानने लगे। मनुष्य की योग्यता चाहे जितनी बडी-चढ़ी क्यों न हो, पर फल तो उसे उतना ही मिलेगा, जितनी योग्यता का वह अपने आपको समझता होगा। अल्प बुद्धिवाला आत्म-विश्वासी उस बल-बुद्धिसम्पन्न मनुष्य से कही अधिक कार्य्य कर सकता है जिसे अपनी आत्मा में विश्वास नहीं है।

मेरी समझ में हीन और क्षुद्र प्रकृति से रक्षा पाने का इससे और कोई दूसरा उत्तम उपाय नहीं है कि हम अपने आत्ममहत्व को बढ़ाते रहें-हम मानते रहें कि संसार में हमारा भी कुछ महत्व है। इससे हमारे आत्मा की सब शक्तियाँ एकत्रित होकर हमारे आदर्श को पूरा करने में लग जायँगी, क्योंकि हमारे जीवन का यह एक नियम है कि वह हमारे उद्देश्य का अनुकरण करता है।

आप अपना और दैवी सम्भावनाओं का उन्नतिशील और अत्युच्च आदर्श खड़ा कीजिये और इस आदर्श को सिद्ध करने

के लिये जी-जान से लग जाइए, जरूर आपको सफलता प्राप्त होगी।

हमारी बहुत सी मानसिक शक्तियाँ चाहे जितनी प्रबल क्यों न हों, पर यदि उनका संचालन अविचल आत्म-विश्वास द्वारा न किया जायगा, तो उनका विशेष उपयोग नहीं होगा। मानसिक शक्तियों पर आत्म-विश्वास का बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है। संसार में ऐसा कोई पदार्थ नही है, जो मनुष्य को ऊँचा उठावे, जो मनुष्यों की हीन प्रकृति से रक्षा करे, जैसा कि दृढ़ आत्मविश्वास है। मानवी सभ्यता में आत्म-विश्वास ही बहुत ऊँची शक्ति मानी गई है। मानवी कार्य्यों में इस शक्ति की गणना सबसे पहले की गई है। अधिक क्या कहें, इसी दिव्य शक्ति के द्वारा मनुष्य जगदात्मा के ऐक्य का सुखानुभव तक करने लगता है। आत्म-विश्वास हमारी दूसरी शक्तियों को भी बड़ा ही प्रोत्साहन देता रहता है। आत्म-विश्वास की जितनी अधिक मात्रा हममें होगी, उतना ही हमारा सम्बन्ध अनन्त जीवन और अनंत शक्ति से गहरा होता जायगा।

संशय ही हमारी कार्य्य-सम्पादन-शक्ति को पंगु करनेवाला है। कार्य करने के पहले मनुष्य का यह विश्वास होना ही चाहिये कि मैं इस कार्य को अवश्य कर सकूँगा। जहाँ तक संशय का लेश भी उसमें बना रहेगा, वहाँ तक वह अपने कार्य में पूरी सफलता न पा सकेगा। वह मनुष्य जिसका उद्देश्य आत्म-विश्वास और अभिलाषा से भरा हुआ है, तब तक चैन नहीं पा सकता, संतोष प्राप्त नही कर सकता, जब तक कि वह उसे पूरा न कर ले। अवश्य ही ऐसा मनुष्य अद्भुत सफलता प्राप्त करेगा, चाहे कितनी ही कठिनाइयाँ उसके मार्ग में बाधा क्यों न डालती रहें।

मैं जानता हूँ कि जिन लोगों ने ससार में अद्भुत सफलता प्राप्त की है, वे हमेशा इसी बात को मानते रहे है कि हमारा पासा हमेशा सीधा ही पड़ेगा, कभी उलटा न पड़ेगा। अपने उद्देश्य का मार्ग चाहे जितना कंटकाकीर्ण और अन्धकारमय उन्हें दीखता हो, पर वे इस बात की दृढ़ आशा और विश्वास रखते हैं कि हमें अपने उद्देश्य पर पहुँचने में ज़रूर सफलता प्राप्त होगी। इसी तरह आशामय मनोभाव रखने से वे सफलता के तत्त्वों को अपनी ओर खींचते रहते हैं।

हमारी शक्तियाँ वैसा ही काम करेंगी, जैसा कि हम उन्हें हुक्म देंगे। वे स्वभावतया उन्हीं पदार्थों को उत्पन्न करेंगी, जिनकी चाह हम उनसे करेंगे। यदि हम उनसे बहुत कुछ माँग करें और यह आशा रखें कि वे हमें अवश्य सहायता दे देंगी तो ज़रूर ही वे हमारे मनोरथों के सफल होने में सहायक होंगी।

हमारी मानसिक शक्तियाँ, हमारे आत्म-विश्वास और धैर्य पर, निर्भर करती हैं। वे हमारी कार्य-कर इच्छा-शक्ति के पूर्णतया अधीन हैं। अतएव यदि हमारी इच्छा-शक्ति पोची और कमज़ोर होगी तो हमारी मानसिक शक्तियों का कार्य भी वैसा ही होगा। जहाँ हमारे आत्म-विश्वास और धैर्य्य में कमज़ोरी आई कि हमारी कार्य्य-सम्पादन-शक्ति में भी कमज़ोरी आ जायगी।

मेरा विश्वास है कि मनुष्य के जीवन के लिए इससे और कोई अच्छी बात नहीं है कि वह हमेशा यह मानता रहे कि मेरे लिये सब कुछ अच्छा होगा। जो कुछ कार्य्य मैं हाथ में लूँगा उसमें अवश्य ही मुझे सफलता प्राप्त होगी।

बहुत से मनुष्य यह दुराशा धर कर कि हमें कभी सफलता प्राप्त न होगी, दैव हमारे विपरीत है, अपने मुँह सफलता

को जवाब दे देते हैं। उनका मानसिक भाव सफलता-विजय के अनुकूल नहीं होता। वे असफलता के परमाणुओं को अपनी ओर आकर्षित करते हैं। सफलता और विजय के भाव पहले मन ही में उत्पन्न होते है। यदि हमारा मन शंकाओं से भरा हुआ होगा, तो इसका परिणाम भी वैसा ही निराशा-जनक निकलेगा। विजय को प्राप्त करने के लिये अविचलित श्रद्धा की अत्यंत आवश्यकता है।

बहुत से मनुष्यों की स्वाभाविक प्रवृत्ति ही विजय की ओर झुकी हुई रहती है—वे विजय ही विजय के स्वप्न देखा करते है। उनकी दृष्टि में सफलता ही की झलक पड़ा करती है। उनकी आदत ही होती है कि वे विजय-सफलता के विश्वास ही से किसी कार्य को शुरू करते हैं और वे उसमें अद्भुत सफलता पा जाते हैं।

विघ्न बाधाओं का खयाल और सफलता

बहुत से मनुष्यों के नाकामयाब होने तथा अच्छे अवसरों के रहते भी मध्यम स्थिति मे पड़े रहने का कारण यह है कि वे अपने मार्ग की विघ्न-बाधाओं ही का ख़याल करते रहते है।

इससे उनका दिल टूट जाता है। साहसिक कार्य करने के वे योग्य नही रहते। उनकी उपज-शक्ति नष्ट हो जाती है। उनका मन निषेधात्मक हो जाता है। आशा और आत्म-विश्वास ही वे पदार्थ हैं जो हमारी शक्तियों को जागृत करते हैं और हमारी उपज-शक्ति को दुगुना तिगुना बढ़ा देते है।

जिस मनुष्य को चहुँ ओर विघ्न बाधाएँ ही दीखा करती हैं उसका आत्म-बल कमज़ोर हो जाता है। वह किसी महान्

कार्य्य को नहीं कर सकता। उसके मस्तिष्क से किसी नये आविष्कार की सृष्टि नही हो सकती। क्योंकि उसकी उपज-शक्ति पर निराशामय काला परदा पड़ा रहता है। वह इस मनुष्य की संकीर्ण दृष्टि के कारण अलग नहीं हो सकता। यदि हम किसी ऐसे मनुष्य लो देखें जो महान् कार्य कर रहा है, तो हमें समझ लेना चाहिये कि वह अपने मार्ग पर आनेवाली विघ्न-बाधाओं का बड़ी वीरता के साथ सामना कर रहा है।

नेपोलियन की जीवनी से आपको मालूम होगा कि जब इस महावीर के मार्ग में आल्पस् का पर्वत पड़ा तब उसके साथियों ने कहा कि अपनी सेना इस दुर्भेद्य पर्वत को कैसे लांघ सकेगी। इस पर नेपोलियन ने हँस कर कहा कि इसमें मार्ग बना दिया जायगा। बस फिर क्या देर थी! काम शुरू कर दिया गया। आल्पस् में मार्ग बना दिया गया। फौज के जाने का रास्ता खुल गया। क्या कोई मनुष्य यह कहने में हिचक सकता है कि यह सब उस वीर के साहस और आत्म-विश्वास ही का परिणाम था।

हमारी समझ में मनुष्य कहलाने का अधिकारी वही है, जो अपने आदर्श को पूरा करने के लिये तन, मन और धन से लग जाता है—मन, वचन, काया को एक कर डालता है—जो दावे के साथ इस बात को कहता है कि असफलता—अविजय कोई चीज़ ही नहीं है उसे विजय—सफलता—पर पूरा आत्म-विश्वास होता है।

यदि ह यह विश्वास है कि हम बड़े कार्य्य कर सकेंगे क्योंकि हममें यह योग्यता है जिससे महान् कार्य्य सम्पादन किये जा सकते हैं, तो हमें अवश्य ही सफलता प्राप्त होगी।

परम पिता परमात्मा ने श्रद्धा और विश्वास को इसलिये

उत्पन्न किया है कि वे हमें गिरने से बचाने के लिये हमारा बाहु पकड़ें, हमें मुसीबत के समय धैर्य और आश्वासन देते रहें। मनुष्य के लिये ये उतने ही काम के हैं, जितने तूफान के वक्त नाविक के लिये दिग्दर्शन यन्त्र। जिस तरह घोर तूफ़ान के समय भी नाविक को इस यन्त्र के कारण इस बात का आश्वासन रहता है कि चाहे जितना तूफ़ान क्यों न हो, समुद्र में चाहे जितना अन्धकार क्यों न छा गया हो, मैं इस यन्त्र के द्वारा दिशा का पता लगाकर अपने निर्दिष्ट स्थान पर पहुँच सकूँगा। उसी तरह जिस मनुष्य को पूरा आत्म-विश्वास है उसे इस बात का गुमान रहता है कि चाहे जितने मुसीबत के पहाड़ मेरे रास्ते में क्यों न आवें, पर मुझ में वह शक्ति है कि मैं उनमें अपना रास्ता बना सकूँगा।

दुनिया उस मनुष्य के लिये स्वयं रास्ता कर देती है, जो शक्तिशाली, आत्म-विश्वासी और दृढ़ाग्रही है। जो इस बात को जानता है कि संसार में ऐसा कोई पदार्थ नहीं—ऐसी कोई विपत्ति नहीं जो मेरी शक्ति का सामना कर सके। कायर मनुष्य ही इनसे डर सकता है—रास्ते में इन्हें पाकर पथ-भ्रष्ट हो सकता है। पर मैं तो इन पर पूरी पूरी विजय पा सकता हूँ।

उत्तरदायित्व—जिम्मेदारी—अपने सिर लेने से मत घबराइए। इस बात का पक्का इरादा कर लीजिये कि जो उत्तर-दायित्व हमारे सिर पड़ेगा, उसे हम दूसरे मनुष्यों से कहीं ठीक निभाएँगे। मेरी राय में यह एक बड़ी भूल है कि हम अपने वर्त्तमान उत्तरदायित्व से यह ख़याल कर बरी होने की कोशिश करते हैं कि आगे हम योग्य बन कर ऐसे उत्तर-दायित्व को अपने सिर पर ले लेंगे। मान लीजिये—आपको कोई

पद मिलता है–जो जिम्मेदारी का है, आप उसे लेने से घबराते हैं। आप चाहते हैं कि इसे फिर लेंगे अभी नहीं–तो कहिये इसमें आपको क्या लाभ होगा? यदि आप उसे ग्रहण कर लेंगे और सुचारु-रूप से उसे चलाते रहेंगे तो धीरे धीरे आपकी आदत में यह बात परिणत हो जायगी और आपको उसकी तनिक भी झुँझलाहट न मालूम पड़ेगी। आपको तनिक भी बोझ मालूम न पड़ेगा। और इससे आपकी ऊँचे पद को ग्रहण लरने की योग्यता बढ़ जायगी—सहज स्वभाव से आप ज़बर-दस्त जिम्मेदारी के काम को कर सकेंगे।

जो वस्तु आपके लिये परम हितकर है, चाहे वह कितनी ही कठिन एवं अप्राप्य क्यों न मालूम होती हो, आप उसे प्राप्त करने के लिये निश्चय कर लीजिये। जरूर वह आपको प्राप्त होगी। इस तरह के निश्चय से आपका मनुष्यत्व बढ़ेगा।

महानता की आकांक्षा करने से मत डरिये। खुले दिल से इस तरह की आकांक्षाएँ करते जाइए। जरूर आपमें वे शक्तियाँ विकसित होकर सहायता करेंगी, जिनकी आपको स्वप्न में कल्पना न थी।

महानता की महात्वाकांक्षा करने से हमारी आत्मा की सर्वोत्कृष्ट शक्तियों का विकास होता है, वे जाग्रत हो जाती हैं।

आप अपने आपको हमेशा सौभाग्यशाली खयाल कीजिये। ऐसा करने की आदत डाल लीजिये। फिर देखिए कि इसका क्या प्रभावशाली फल निकलता है। आप इस बात की आदत डाल लीजिये, जिससे आप जीवन के प्रत्येक अनुभव से श्रेष्ठता ही की आशा रख सकें। लोगों को आप इस बात का विश्वास

करा दीजिये कि वे आपको सौभाग्यशाली समझें—उनका खयाल हो जाय कि हर कार्य्य में आपको यश मिलेगा।

अमेरिका के भूतपूर्व प्रेसिडेन्ट थिओडर रुजवेल्ट की लोगों में यह ख्याति हो चुकी थी कि जिस काम को वे हाथ में लेते हैं, उसमें यश पाते है। इस तरह की ख्याति से इन महानुभावों को बड़ा ही लाभ हुआ। महाशय रुजवेल्ट की यह ख्याति थी कि वे राज्य के मामलों में बड़े ही कुशल हैं—अद्वितीय हैं। उनसे बड़ी बड़ी आशाएँ की जा सकती हैं। वे चाहे जो कुछ करते हों—चाहे जिस मार्ग पर जा रहे हों पर लोगों का विश्वास रहता था कि वे अवश्य ही विजयी होंगे। इस तरह के आशामय विचारों के प्रभाव से महाशय रुजवेल्ट की कार्य्य-सम्पादन-शक्ति को बड़ी सहायता मिलती थी। उनकी इच्छा-शक्ति इस तरह की दिव्य सहायता पाने से खिल उठती थी। उन्हें विश्वास हो उठता था कि परम पिता जगदीश्वर ने महान् कार्य्य करने ही के लिये मुझे उत्पन्न किया है। सृष्टिकर्त्ता का उद्देश्य यह है कि मैं महान् कार्य्य करूँ। देश की सुख, समृद्धि और सभ्यता के बढ़ाने में लग जाऊँ। मेरे ही हाथों यह कार्य्य होना है।

कहना होगा कि उनकी आत्म-श्रद्धा ने देश के विश्वास को अपनी ओर खींच लिया। उनकी सुकीर्ति की मनोहर सुगन्ध आज अमेरिका राष्ट्र के हृदय को आनन्द के हिलोरे खिला रही है। जितना तुम अपने इस आत्म-विश्वास को बढ़ा लोगे कि जो कुछ हम चाहते हैं, वह हम कर सकेंगे, उतनी तुम्हारी कार्य-कर योग्यता बढ़ती जायगी। आप बड़प्पन का खयाल कीजिये, आप जरूर बड़े होंगे।

कार्य्य और आशा

देखा जाता है कि बहुत से मनुष्य योग्यता के रहते हुए भी अपने सारे जीवन में बहुत ही कम काम कर सकते हैं, क्योंकि वे बड़ी बुरी तरह निराशाजनक प्रेरणाओं के शिकार बन जाते हैं। जब वे किसी काम में हाथ डालते हैं, तभी से असफलता के चिह्न उन्हें दीखने लग जाते हैं, लाचारी ही के विचार उनके मन में ज़्यादातर आने लगते हैं, इसीसे उनकी कार्य-कर शक्ति मारी जाती है।

मैं अभागा हूँ। परमात्मा ने मुझे भाग्य-हीन ही पैदा किया है! दैव मेरे विपरीत है—इस तरह की खराब प्रेरणाओं का जैसा भयङ्कर परिणाम हो जाता है, वैसा किसी दूसरी बातों से नहीं होता। हमें जानना चाहिये कि भाग्य हमारे मानस क्षेत्र में ही छिपा है। वह किसी तरह मनोक्षेत्र से बाहर नहीं रह सकता। हम ही हमारे भाग्य के कर्त्ता विधाता हैं। हममें वह शक्ति है कि हम अपने भाग्य पर पूरी तरह शासन कर सकते हैं।

हम देखते हैं कि एक ही गाँव में जहाँ बहुत से मनुष्य यह रोना रोया करते हैं कि हमारी परिस्थिति अनुकूल नही है, हमें किसी प्रकार की सुविधाएँ नहीं हैं, वहाँ वैसा ही अवस्थाओं के दूसरे मनुष्य उन्नति करते जाते है और दुनिया में अपना वज़न बढ़ाते जाते है।

उस मनुष्य के लिये क्या किया जाय जिसका खयाल ही ऐसा है कि मैं अभागा ही जन्मा हूँ। मुझे सफलता—विजय प्राप्त नही हो सकती। असफलता के विचार से सफलता का उत्पन्न होना उतना ही असम्भव है, जितना बबूल के काँटों से गुलाब के पुष्प का उगना।

जब मनुष्य गरीबी के—असफलता के विचारों से बहुत हैरान हो जाता है; जब केवल ये ही विचार उसके मगज़ में घूमा करते हैं, तो उसके मन पर इन्हीं विचारों का सिक्का जम जाता है, जिसका परिणाम उसके लिये बहुत बुरा होता है। ये विचार उसके मनोरथों को सिद्ध नही होने देते।

हम अपने भाग्य पर बहुत आरोप लगाया करते हैं, जो कि वास्तव में हमारे ही विचारों का फल है। हम देखते हैं कि बहुत से लोग बड़ी योग्यता के न होने पर भी उन्नतिशील दिखाई देते हैं, जब कि हम योग्यता के होते हुए भी असफलता के बड़ी बुरी तरह शिकार बन जाते हैं। हम केवल यह सोच कर बैठ जाते हैं कि दैव उन्हें मदद कर रहा है, विधाता ने उनके भाग्य में सौभाग्य-शाली होना लिखा है, पर हमारे भाग्य वैसे तेज़ नही, दैव हमारे विपरीत है, क्या करें। वे इस बात को नही सोचते कि उनका भाग्यशाली होना और हमारा कमनसीब होना, यह सब अपने अपने विचारों का फल है।

हम यह नहीं जानते कि हम अपने विचारों का किस तरह संचालन करें। हम अपने विचारों पर बराबर अधिकार नही रखते। हम अपनी आत्मा पर अपनी महत्वाकांक्षाएँ पूरी कराने के लिये ज़ोर नही देते। हमें चाहिये कि हम अपने आपको दिव्य और अलौकिक प्रकाश में देखें। हमें चाहिये कि

हम अपने आपको सर्वोत्कृष्ट प्राणी मानें और यह दावा करते रहें कि अनन्त शक्ति—अनन्त वीर्य्य—हमारी आत्मा में मौजूद हैं। अपने आपको दिव्य मानने से आप मत डरिये, क्योंकि यदि जगत कर्त्ता परमात्मा ने आपको बनाया है तो ज़रूर आप में उसकी दिव्य शक्ति—दिव्य गुण—मौजूद हैं। ज़रूर आप का ईश्वरीय शक्ति पर अधिकार है।

आकांक्षाओं के अनुकूल प्रयत्न करते रहना और आचरण करना, इस बात में सचमुच एक अजीब तरह की उपज-शक्ति भरी हुई है।

मसलन यदि आप तन्दुरुस्त रहना चाहते हैं तो तन्दुरुस्ती के खयाल को इफरात से अपने मन में आने दीजिये। उसके मार्ग में किसी तरह की रोक मत कीजिये। आप तन्दुरुस्ती का भाव रखिये, बातें तन्दुरुस्ती की कीजिये और साथ साथ आचरण भी तन्दुरुस्ती का कीजिये। दावा कीजिये इस बात का कि उस पर हमारा स्वाभाविक हक़ है।

यदि आप समृद्धिशाली होना चाहते हैं तो समृद्धि के विचारों को बहुतायत से अपने मनोमन्दिर में आने दीजिये। कभी इस बात को मत सोचिये कि समृद्धि के विपरीत गुण रखनेवाली कोई वस्तु हमारे मन में प्रवेश कर जायगी। अपने मानसिक भाव को—अपने विचारों को—अपने आचरण को समृद्धि के अनुकूल बना लीजिये। आप समृद्धि-शाली, उन्नति-शील मनुष्य सा बर्ताव कीजिये, उसके समान पोशाक पहनिये, उसके समान अपने विचारों को बना लीजिये। ज़रूर आपको सफलता प्राप्त होगी। समृद्धि के तत्त्व आपकी ओर खिंच आवेंगे।

जैसे बनना चाहो वैसे ही विचारों से हृदय को भर दो

यदि आप शूर वीर और बहादुर होना चाहते हैं तो आप निर्भयता के—बहादुरी के खयालों ही को अपने मन में आने दीजिये। निश्चय कर लीजिये कि हम किसी बात से न डरेंगे। कोई हमें डरपोक नहीं बना सकता। यदि आप डरपोक हैं, बात बात में आपको शङ्का होती है और आप इस तरह की कायरता को छोड़ना चाहते हैं, तो अब इस बात का ख़याल कर लीजिये कि हम मनुष्य हैं, कायर जन्तु नहीं, हमें डर किस बात का? डर हमारे सामने आ नहीं सकता। हमारी रचना ही परमात्मा ने ऐसी की है कि उसमें भय के तत्त्व ही नहीं रखे हैं, हम दुनिया में महान साहसिक काम करने के लिए बनाये गये हैं। इस तरह के विचारों की रोजमर्रा पुनरावृत्ति कीजिये और फिर देखिये कि वीरता के कैसे कीमती जौहर आपकी आत्मा में पैदा होते हैं।

यदि आपको माता पिता यह कहें कि तुम मन्दबुद्धि हो, डरपोक हो तो इस बात से साफ इन्कार कीजिये। कभी ऐसी बातों का असर अपने पर मत होने दीजिये। हृदय से इस बात का विश्वास करते रहिये कि हम मन्दबुद्धि नहीं—हम कायर नहीं। हम में वह योग्यता है, वह साहसिकता है, जिससे हम बड़े बड़े कार्य्य कर सकते हैं, दुनिया हमारे कामों को देख कर दंग हो जायगी।

इस निश्चय से कि जो हम चाहते हैं, वह हम कर सकेंगे, जितना आप अपने आत्म-विश्वास को बढ़ावेंगे, उतनी ही आपकी योग्यता बढ़ेगी।

लोग आपके बाबत चाहे जो खयाल करें पर आप इस विचार पर जमे रहिये कि जो कुछ आप करना चाहते हो, वह आप कर सकोगे, जो आप होना चाहते हो वह आप हो सकोगे।

आपको यह बात न भूलना चाहिये कि आत्म-प्रेरणा (Self-suggestion) में बड़ी शक्ति भरी हुई है। आप हमेशा इस तरह का आचरण रखिए। इस तरह से बर्तिये कि जिससे स्वयमेव आपकी मानसिक प्रेरणा विजय, वृद्धि, उन्नति और उच्चता के लिये स्फुरित हुआ करे। लोगों में आपकी यह वाह वाह हो जाना कि आप उन्नति के मार्ग पर बड़ी तेज़ी से अग्रसर हो रहे हैं—आप महापुरुष होते जा रहे हैं—समाज में वज़न प्राप्त कर रहे हैं—क्या कुछ कम बात है ?

जब आप किसी मनुष्य से मिलते हैं, तो तत्काल आपके मानसिक भावों का उस पर प्रभाव पड़ने लगता है। यदि आप में कुछ प्रभाव भरा हुआ होगा तो वह उस पर पड़े बिना किसी तरह न रहेगा। यदि वह आप में यह बात देखेगा कि आपकी प्रवृत्ति उच्चता की ओर लग रही है—आप बड़े मनुष्य होनेवाले हैं—दिन दिन आप उन्नति कर रहे हैं, तो उसका यह ख़याल ज़रूर हो जायगा कि आप होनहार हैं।

कभी आप अपने आपको नीच, दीन, दुःखी, दरिद्री, ख़याल मत कीजिये। कभी यह बात मत मान बैठिये कि हम निर्बल, अकर्मण्य और रोगग्रस्त हैं। आप अपने को हमेशा पूर्ण और साङ्गोपाङ्ग ख़याल कीजिये। कभी आप इस विचार को मत फटकने दीजिये कि हमें असफलता का सामना करना पड़ेगा।

दुःख, दरिद्रता और असफलता उस मनुष्य के पास कभी नहीं फटक सकती, जिसने अपनी प्रकाशमय बाज़ू को देख लिया है—जो दैवी तत्वों में तन्मय रहता है। यह तो उन्हीं के पल्ले पड़ती है जिन्होंने अपनी दैवी-तत्वों में तन्मयता नहीं प्राप्त की है, जिन्होंने अपनी शक्तियों का विकास नहीं किया है।

इस बात को ज़ोर के साथ मानते रहिये कि संसार में हमारे लिये जगह है और हम उस पर अधिकार करेंगे। आप अपनी आत्मा को ऐसा शिक्षण दीजिये, जिससे वह महान् आशा रखना सीखे। आप अपने चाल-चलन—आचार विचार—से कभी इस बात को मत प्रकट कीजिये कि दुनिया में हम क्षुद्र कामों ही के लिये बनाये गये हैं। आप अपनी प्रकृति को निश्चयात्मक रखने का मुहावरा डालिये—आप हमेशा सुख-समृद्धि के विचारों के प्रवाह को अपने मन में बहाइए—ज़रूर ये आपको संसार में योग्य स्थान दिलवाएँगे।

विचार ही शक्ति है। हम और हमारी अवस्थाएँ विचारों के फल हैं। हम अपने विचारों के बाहर नहीं जा सकते।

किसी महापुरुष ने कहा है—"मानवी कर्तव्य बस इस बात में समा गया है कि पहले यह जान लेना कि हम क्या होना चाहते हैं और फिर निरन्तर उसीका विचार किया करना।" सेण्ट पाल नामक सुप्रसिद्ध साधु ने शुद्ध विचार के तत्व को बखूबी समझ लिया था। वह इस बात को जान गया था कि जो आदर्श निरन्तर हमारे मन में रहते हैं, वे ही हमारे चरित्र को सङ्गठित करते हैं—वे ही हमारी आत्मा को सुशृंखलित करते है, इसीसे उसका उपदेश बड़े अच्छे विचारों से भरा हुआ है। वह यह है "जो कुछ सत्य है, जो कुछ प्रामाणिक है—जो कुछ न्यायपूर्ण है—जो कुछ प्रेममय है अर्थात् जिसमें श्रेष्ठता और उच्चता विद्यमान है, उसीका विचार करो।"

"उसीका विचार करो" यह कहने से सेण्ट पाल का यह उद्देश नहीं है कि तुम उन बातों को मन में केवल इधर उधर घुमाया करो, पर उन पर अपनी स्थिति को कायम करो—मनोमन्दिर में उनकी नीव जमा दो। तब तक उनका पीछा मत

छोड़ो जब तक कि वे तुम्हारी आत्मा में परिणत न हो जावें—ठीक तरह बैठ न जावें—जब तक कि वह तुम्हारी—आत्मा के एक विशेष अङ्ग न बन जावे। यदि हम बुरे विचारों पर स्थित रहेंगे, तो हममें से बुराई ही पैदा होगी। यदि हमारी आत्म-प्रेरणाएँ हीन और अशुद्ध होंगी तो हम भी हीन बन जावेंगे। सेण्ट पाल ने इस बात को अच्छी तरह जान लिया था कि जिन पदार्थों पर हम अपनी स्थिति कायम करते हैं, जिनका हम मनन करते हैं, वही पदार्थ हमारी मानसिक माला में गुंथ जाते है।

मैं चाहे जो करता हूँ, पर मैं अपने विचारों के बाहर नही जा सकता। मैं अपने विचारों ही के वायुमण्डल में रहता हूँ। मेरे आदर्श मेरे सिर के आस पास हमेशा चक्कर लगाया करते है—आत्म प्रेरणाओं का मुझ पर हमेशा असर हुआ करता है।

यदि मेरे विचार संकीर्ण हैं तो मैं संकीर्ण-संसार के परिसर से बाहर नहीं जा सकता। यदि मेरे विचार दुष्ट, उदासीन और वेहमदर्दी वाले हैं तो मै कभी उदार और श्रेष्ठ संसार में नहीं रह सकता। मैं उसके सच्चे आनन्द को नही लूट सकता और मुझे यह अधिकार नही है कि संकीर्ण विचारों के रखते हुए मैं यह दावा करूँ कि मुझे श्रेष्ठ संसार में स्थान मिले। यह दावा करना ठीक वैसा ही है, जैसे बबूल का पेड़ रोप कर आम के मीठे फलों की आशा करना।

यह बात सच है कि हम अपने ही उत्पन्न किये वायुमण्डल में रहते हैं पर उसके साथ साथ यह बात भी असत्य नहीं है कि हम अपने विचार-परिवर्तन द्वारा उसे बदल सकते हैं। जिस तरह के हमारे विचार होंगे—जैसे हमारे विचारों का गुण होगा—वैसा ही और उसी गुणवाला वायुमण्डल हमारे आसपास बना रहेगा।

अब यह बात भली भांति सिद्ध हो चुकी है कि जो मनुष्य बुरी आदतों के शिकार बन चुके हैं, वे अपने आपको बखूबी सुधार सकते हैं, यदि वे सुधरने का निश्चय करके अपने विचारों में परिवर्तन करना शुरू कर दें—यदि वे मन, वचन और काया से इस बात को मान लें कि अब हम बुरी और हीन आदतों से कोई वास्ता नही रक्खेंगे। शराबखोरी आदि सब व्यसनों से अब हम सदा के लिये अपना सम्बन्ध तोड़ देंगे।

मैं नही समझता कि आप अच्छी कार्य-सम्पादन-शक्ति को कैसे प्राप्त कर सकते हैं, जब कि क्लेश, भय, चिन्ता, अनुत्साह, आपके आन्तरिक शक्ति को नोच नोच कर चबा रहे हैं। आप इन शत्रुओं से अपने मन को मुक्त कीजिये अन्यथा आप में यह कुछ भी बाकी न छोड़ेंगे—सब खा जावेंगे।

द्वेष ने हज़ारों जीवों का नाश कर दिया है। मानवी मन में द्वेष जैसी भयंकरता उत्पन्न करता है, वैसी दूसरा कोई नहीं करता। इस भयंकर राक्षस ने संसार का कितना संहार किया है। इसीके प्रभाव से बड़े बड़े बुद्धिमान एवं प्रतिभा-सम्पन्न मनुष्यों का जीवन मिट्टी में मिल गया है। इसी ने संसार में रक्त की नदियाँ बहाई—भाई भाई में तलवारें चलवाई—राष्ट्र के राष्ट्र गारद कर दिये। उन लोगों के हाथ से भी इस दुष्ट ने कैसे कैसे अत्याचार करवाये, जिसका मन इसके आक्रमण के पहले बड़ा ही शुद्ध और निर्मल था।

तुम उन विचारों को अपने मन से बाहर निकाल दो, जो तुम्हारे मन को बुरे मालूम होते हैं। क्या चिन्तापूर्ण विचार, क्या दुष्ट विचार, क्या भयपूर्ण विचार ये सब तुम्हारी उपज-शक्ति को पंगु बनानेवाले हैं।

छाती पर हाथ ठोक कर इस बात को कहो कि हम में योग्यता, बल और कार्य-सम्पादन-शक्ति भरी हुई है। ये शक्तियाँ हमारी मानसिक-शक्ति को बड़ा ही अपूर्व लाभ पहुँचाने वाली हैं। इसी तरह के विचार से—इसी तरह के आदर्श से—मनुष्य बलवान् बनता है।

अपने जीवन के दुःखमय अनुभवों को भूल जाओ। कभी उन्हें याद मत करो, क्योंकि इससे तुम्हारी उपज-शक्ति मारी जाती है—तुम्हारी प्रतिभा का विनाश होता है। तुम अपने जीवन के सुखमय अनुभवों को याद करो, इससे तुम्हारे मस्तिष्क की शक्ति खिल उठेगी। तुम्हारी प्रतिभा-शक्ति को अपूर्व प्रोत्साहन मिलेगा। परवाह मत करो इस बात की कि लोग तुम्हारे विषय में क्या ख़याल रखते हैं, तुम अपने मन में यह बात कहते रहो "मुझमें वह शक्ति है—वह योग्यता है—वह कार्य्य-सम्पादन का बल है—कि मैं दुनिया में अपूर्वता प्रकट कर सकता हूँ। दूसरे बड़े लोगों के समान मैं भी हो सकता हूँ। संसार में ऐसा कोई पदार्थ नहीं है, जो मेरी मानसिक शक्ति का भङ्ग कर सके—जो मेरी कार्य्य-सम्पादन-शक्ति का नाश कर सके। मैं दुनिया में अपनी अपूर्वता का सन्देशा फैलाऊँगा। दुनियाँ में मैं उस रोशनी का प्रकाश करूँगा जिससे, कि वह अन्धकार में से निकल जावे और प्रकाश की ओर उसकी गति हो जावे। ईश्वर ने मेरी बनावट ही में वह तत्व रक्खा है, जिससे मैं इन महान् कार्य्यों को कर सकूँगा। दूसरे मनुष्य जो आन्तरिक प्रकाश को प्रकाशित करने में हिचकते हैं, इसका कारण यह है कि उन्हें इस बात का विश्वास नहीं रहता कि अनन्त शक्ति—परमात्मा—के हम अंश है-हममें अपूर्व योग्यता भरी हुई है—हमारी कार्य्य-सम्पादन शक्ति बहुत अद्भुत है, अर

मुझे तो इस बात का कारण ही दिखाई नहीं पड़ा कि मैं दुनिया में अपना सन्देशा सुनाने के क्यों योग्य नहीं हूँ ?

जब आपको मालूम हो कि उदासी का परदा हम पर पड़ा चाहता है, जब आपको ऐसा मालूम हो कि नीच विचार हमारे पास आना चाहते है, जब आपको ऐसा मालूम हो कि हमारा मन बेकाबू हो रहा है, तब आप नीचे लिखे अनुसार क्रिया कीजिये। आप एकदम काम करना बन्द कर दीजिये और घर से बाहर निकल कर किसी शान्त जगह में चले जाइए। हो सके तो किसी ऐसी जगह में चले जाइए जो शान्त और प्राकृतिक सौन्दर्य्य से विभूषित हो। वहाँ एकचित्त होकर इस बात का विचार कीजिए कि अब मैं अपने मन से उन कुविचारों को देश-निकाला देता हूँ जो कि मेरी मानसिक एकाग्रता में विघ्न डालते है और मेरे मन को ठिकाने नही रहने देते। उस समय आप केवल उन पदार्थों का जो सुन्दर आनन्दपूर्ण और एकाग्रता के सूचक हों, ध्यान कीजिये। ऐसी ही वस्तुओं का वहाँ मनन कीजिये। वहाँ आप यह निश्चय कर लीजिये कि अब हमारे मन मे आनन्द-परिपूर्ण विचारों ही का प्रवाह वहेगा। उदासीनता के विचार मेरे पास फटकने तक न पावेंगे।

दूसरे शब्दों में यों कह सकते है कि आप किसी प्रशान्त स्थान में निश्चय कर लीजिये कि हम उन गुणों का विकास करेंगे जो सच्चे मनुष्यत्व के द्योतक हैं। इस बात को विश्वास-पूर्वक मनन करते रहिए कि संसार में ऐसा कोई पदार्थ नही है जो उस महापुरुष को प्राप्त न हो, जिसने अपनी शक्तियों का पूर्ण-रूप से विकास किया है। परमात्मा ने हमें इसलिये बनाया

है कि हममें दिव्य शक्तियों का विकास हो—किसी तरह की कमी और अपूर्णता न रहे। इस तरह के दिव्य विचारों के समुद्र में अपने मन को हिलोरे देते हुए आप अपने काम पर जाइए। खुली हवा में सानन्दित होकर विजय की सफलता के श्वासोच्छ्वास लीजिए और फिर अपने काम पर लौटिये और उस सफलता का मज़ा चखिये जो ऐसा करने से आपको प्राप्त होगी। मैं निश्चय-पूर्वक कहता हूँ कि आप अपने में दिव्य-शक्ति और नवजीवन का संचार होता हुआ देख कर आश्चर्य्यचकित हो जावेंगे।

मेरे एक मित्र हैं जिन्हें उपर्युक्त क्रिया से बड़ा ही लाभ पहुँचा है। जब कभी उन्हें मालूम होता था कि मेरे हाथों से इच्छानुसार काम नहीं हो रहा है, मेरी बुद्धि भ्रमित होती जाती है, मेरी निर्णय-शक्ति का ह्रास हो रहा है, तब वे अकेले किसी निर्जन, शांत और सुन्दर वन में चले जाया करते थे और हृदयपूर्वक ये उद्गार निकालते थे।

हे नवयुवक! अब तुम्हें उस मार्ग पर आने की आवश्यकता है, जो उन्नति के द्वार तक पहुँच रहा हो। अभी कुछ पहले तुम्हारे जीवन की मधुरता जा रही थी, तुम्हारा आदर्श गिर रहा था। तुम अपनी गरीबी की हालत से बेपरवाह थे। तुम कुछ भी अच्छा नहीं कर रहे थे। तुम यह नहीं जानते थे कि इस तरह की निश्चेष्टता और आलस्य से तुम्हारी कार्य्यसम्पादिका शक्ति पर बड़ा ही गहरा घाव लगता है। अच्छे अच्छे अवसरों को तुम हाथ से खो देते थे, क्योंकि तुम उन्नति के पथ पर नहीं थे।

अब तुम्हें अपने आदर्शों को साफ करने की ज़रूरत है, क्योंकि उनपर ज़ंग जमता जा रहा है। तुम सुस्त होते जा रहे हो। हर एक की आसानी तुम चाहने लगे हो। याद रखो कोई मनुष्य उस आदमी को नही मानता जो अपनी शक्तियों को व्यर्थ खोता है,अपने आदर्श को गिरने देता है, अपनी महत्वाकांक्षा को मुर्झाने देता है। पर हे नवयुवक! अब से मैं तुम पर तब तक नज़र रक्खूंगा, जब तक कि तुम अपने ठीक राह पर न आ जाओ, क्योंकि मैं जानता हूँ कि ऐसा किये बिना तुम्हारा ध्यान अपने ध्येय पर पहुँचना असम्भव है।

तुममें वह योग्यता है जिससे तुम वर्तमान समय से बहुत अच्छा काम कर सकते हो। आज रात को तुम इस दृढ़ निश्चय से कार्य्य आरम्भ करो कि नित्य ही ज्यादा सफलता प्राप्त होगी, तो तुम्हारे लिये विजयी होना कोई बड़ी बात नहीं। तुम्हारा जीवन विजय के लिये है। निश्चय कर लो कि आज का दिन तुम्हारे लिये अवश्य विजय का दिन होगा। तुम अपने आपको कार्य्य में लगा दो। अपने मानसिक जालों को बाहर निकाल कर फेंक दो-उसे बिल्कुल साफ कर डालो और केवल अपने उद्देश्य का—अपने ध्येय का—मनन करो।

तुम अपने हाथ से एक भी अवसर मत जाने दो। उसे धर कर पकड़ लो। उसका अच्छा उपयोग करो। जितना लाभ तुम उससे खींच सकते हो, खींच लो।

बहुत से मनुष्य रोया करते हैं कि क्या करें हमारे ग्रह अच्छे नहीं हैं,पर वे यह नही जानते कि हमारी सफलता हम से प्रकट होती है, न कि हमारे ग्रहों से। वही आदमी मारा जाता है, जो अपने को कमज़ोर समझता है। वही आदमी क्षुद्र है जो अपने को क्षुद्र और हीन मानता है—जो यह मानता है

कि संसार के सर्वोत्कृष्ट पदार्थ दूसरों के भाग्य में लिखे है, मेरे भाग्य मे नहीं। दुनिया उसीकी रहती है, जो उस पर विजय पाता है। अच्छे पदार्थों के स्वामी वे ही हो सकते है जो अपनी शक्ति से उन्हें प्राप्त करते हैं।

जिस मनुष्य ने यह शक्ति प्राप्त कर ली है कि वह अपने मन को उन्ही विचारों से भरे जो ऊँचे उठानेवाले हों, आशा-पूर्ण हों, आनन्दमय हों, वही संसार में बड़ी सफलता प्राप्त कर सकता है।

उदासीनता से हानि

अहा! जो मनुष्य खुशमिजाज़ है, जिसकी प्रकृति आनन्दमय है, जो हमेशा आनन्द-समुद्र में लहराता रहता है, भारी से भारी विपत्ति आ पडने पर जिसकी मुस्कुराहट बराबर बनी रहती है, घोरातिघोर दुःख के आक्रमण करने पर भी जिसके मुख-मण्डल पर हास्य-रेखा बराबर-झलका करती है, वह इस तरह की आनन्दमय प्रकृति से खुश मिजाज़ से केवल अपने आप ही को फ़ायदा नही पहुँचाता है, पर उस मनुष्य को भी जीवन की मधुरता का अनुभव करवाने में सहायक हो पड़ता है, जिसका धैर्य्य, आशा और भरोसा ही नष्ट हो गया है। क्या हम उस मनुष्य को बहादुर नहीं कह सकते—वीर की सम्माननीय उपाधि से विभूषित नहीं कर सकते, जिसके मुखमण्डल की हास्यरेखा उस समय भी नहीं मिटती जब उसके जीवन का हरेक पासा उलटा ही पड़ता रहता है। हर बात उसके विपरीत होने लगती है। ऐसे मनुष्य के लिये हम ज़रूर यह कह सकते हैं कि उसका निर्माण जड़ प्रकृति पर विजय पाने के लिये किया गया है, क्योंकि साधारण मनुष्य इस तरह की अलौकिक वीरता नहीं दिखा सकता।

अंग्रेज़ी के सुप्रसिद्ध मि० कार्लाइल महोदय का कथन है "कुछ मनुष्य केवल दरिद्री होने की शक्ति ही में धनी होते हैं" ऐसे मनुष्य मानसिक विष को फैलाते हुए दीख पड़ते हैं।

ऐसे मनुष्यों के लिए मालूम होने लगता है मानों उनमें मानसिक विष फैलाने ही की प्रतिभा काम कर रही है। वे अपने से मिलने जुलनेवाले हरेक मनुष्य के मन में अन्धकारमय और निराशाजनक विचारों ही का प्रवाह चलाते रहते हैं। अपनी उदासी की अन्धकारमय छाया वे हर मनुष्य पर गिराते रहते हैं। उनका विश्वास रहता है कि परमात्मा ने उनके लिये आनन्द उत्पन्न किया ही नहीं, उदासी का परदा उनके अन्तःकरण से किसी तरह नहीं हट सकता, निराशा उनके पल्ले बँधी हुई रहती है।

पर यह सब खामोखयाल है। कोई मनुष्य दुःखी और दरिद्री होने को नहीं जन्मा है—कोई दुनिया में उदासी का अन्धकार फैलाने के लिये—दूसरों के आनन्द को मिटाने के लिये—नहीं जन्मा है। परम पिता परमात्मा की इच्छा है कि हम सब उस के पुत्र खूब आनन्द में मग्न रहें—खुशमिज़ाज रहें—मस्त रहें।

तुम्हें इस बात का अधिकार ही नहीं है कि मुंह पर घोर उदासी एवं खिन्नता की मुद्रा दर्शाते हुए—मानसिक विष फैलाते हुए—भय, शंका, अनुत्साह, और निराशा के कीटाणु फैलाते हुए-मानव समाज में विचरण करो। जिस तरह किसी के शरीर को चोट पहुँचाना तुम्हारे अधिकार के बाहर है, उसी तरह उक्त बात भी तुम्हारे अधिकार की सीमा में नहीं। तुम्हें यह अधिकार नहीं कि तुम इस तरह दूसरों के सुखों पर भी पानी फेरो—उनकी आनन्दमय प्रकृति पर उदासी का काला परदा डालो।

देखा जाता है कि बहुत से उदासी—निराशा की खिन्न मुद्रा को लिये हुए घर के कोनों में बैठे मक्खियाँ मारा करते हैं। वे उदासीन विचारों को बड़े आदर के साथ-बड़े सम्मान के

साथ बुलाते रहते हैं–वे अपनी दरिद्रता और दुर्भाग्य ही का बार बार विचार किया करते हैं–वे जब देखो तब अपने कष्टों की–यन्त्रणाओं की–बात छेड़ा करते है। हर मनुष्य से वे यही कहते रहते हैं कि क्या करें हम कमनसीब है–ईश्वर ने हमारे भाग्य में सुख नही लिखा–हमारा भाग्य फूटा हुआ है–दैव हमारे विपरीत है। उनकी मुख-मुद्रा की ओर देखने से साफ़ साफ़ मालूम होता है कि मानों उन पदार्थों से उन्होने अपना गहरा सम्बन्ध जोड़ लिया है, जो उनके जीवन की मधुरता को नाश कर रहे है, उनके उन्नति के मार्ग में कांटे बिछा रहे है। इस तरह वे हमेशा बेजाने हुए इस तरह के घोर निराशामय विचारों की जड़ अपने मन में जमाते जाते है।

मैं एक मनुष्य को जानता हूँ जो कि उदासीन और निराशाजनक विचारों की बलि पड़ चुका था। उसकी स्वाभाविक वृत्ति कुछ ऐसी हो गई थी कि जहाँ वह जाता था, वहाँ उदासी के, निराशा के, वायु-मण्डल को अपने साथ फैलाता जाता था। जो मनुष्य उसकी ओर देखता था, उसके चेहरे पर भी उदासी छाये बिना नहीं रह सकती थी। उसके औदासिन्य परिपूर्णमुद्रा की ओर देखने से मालूम होता था मानों समस्त संसार का दु:ख. विपत्ति इसीके सिर आ पड़ी है। उसके सम्मुख हँसना और आनन्द को बातें करना दूसरे मनुष्य के लिये भी कठिन पड़ता था। चाहे जितने उत्साह-परिपूर्ण और आनन्दमय होकर आप उसके सामने जाइए, उसकी खिन्न मुद्रा और निर्जीव बातचीत आप के मन पर खिन्नता का परदा डाल देगी। जब कभी मै उसके पास जाता हूँ, तब मुझे मालूम होने लगता है कि मानों मैं सूर्य्य के तेजोमय आकाश से निकल कर घोर अन्धकार की ओर जा रहा हूँ।

परम पिता परमात्मा ने इस सुमनोहर पृथ्वी पर हमें इस वास्ते उत्पन्न किया है कि हम हमेशा खुशमिज़ाज़ रहें-मस्त रहें, आनन्द के समुद्र में लहराते रहें, न कि उदास और खिन्न-मुद्रायुक्त रहें।

महात्मा एमर्सन ने कहा है—"आनन्दी और उत्साही मुद्रा ही हमारी मानसिक उन्नति और सभ्यता की परमावधि है। सदा उस मनुष्य की ओर देखकर, जिसके मुख-मुद्रा पर अलौकिक प्रकाश चमक रहा है—अपूर्व शान्ति झलक रही है-दैवी आनन्द अपना प्रकाश फैला रहा है—हमारे मन में कैसे दिव्य भावों का उदय होता रहता है। ऐसे मनुष्य की ओर निहार कर स्वभाव ही से हमे मालूम होने लगता है कि मानों उसका परम तत्वों के साथ सम्बन्ध है—उसकी दिव्यता खिल रही है—परमात्मा से उसका निकटस्थ संबंध हो रहा है। जहाँ जहाँ वह जाता है, वहाँ स्वभाव ही से आनन्द, उत्साह और आशा की वर्षा करता जाता है। पर हाय! ऐसे मनुष्यों की संख्या बहुत कम होती है।

सभ्यता में उस मनुष्य के लिये जगह नहीं जो उदास, खिन्न और निराश है। कोई मनुष्य उसके साथ रहना नहीं चाहता। हर मनुष्य उसकी हवा बचाने की कोशिश करता है।

उदासी और निराश मन बीमारी को बढ़ाने में सहायक हो पड़ता है, क्योंकि वह हमारी उस शक्ति को नष्ट करता है, जो आधि व्याधि को हमारी ओर आने से रोकती है।

आत्म-पतन और उदासीनता जैसी भयङ्कर चीज़ दूसरी कोई नहीं।

अहा! जब एक आनन्दी और आशापूर्ण आत्मा, किसी ऐसी जगह जाती है जहाँ उदासी, अनुत्साह, निराशा छाई हुई

है, तब वह अपने मस्खरे स्वभाव—आनन्द-प्रकृति और हास्य से वहाँ आनन्द, आशा और उत्साह का मनोहर आभास फैलाता है। वहाँ बैठी हुई खिन्न मुद्राओं को इसके दर्शन मात्र से अलौकिक सुख का अनुभव होने लगता है—उदासी की जगह उनके मुख-मण्डल पर आनन्द और हास्य-भाव झलकने लगता है।

बहुत से मनुष्य विजयद्वार तक पहुँचने में असफल हो जाते हैं, इसका कारण यह है कि वे अपने मनोविकारों को वश में नहीं कर सकते। वे उनके गुलाम बने हुए रहते हैं।

मनुष्य की यह एक स्वाभाविक प्रकृति है कि वह खिन्न और उदास मनुष्यों की संगति को टालना चाहता है. हमारी प्रवृत्ति उन्हीं मनुष्यों की ओर झुकती है जो खुश-मिजाज़ और आनन्दप्रिय होते हैं।

देखा गया है कि कुटुम्ब में केवल एक निराश और उदासीन मनुष्य के होने से सारा का सारा कुटुम्ब दुःखी और निराश मालूम होने लगता है। ऐसा मनुष्य अपने साथ साथ दूसरों को भी दुःखी और निराश बनाने का अपराध अपने सर लेता है। ऐसे मनुष्य का खुद तो आनन्द लूटना दूर रहा दूसरों के आनन्द में भी वह कंटक-रूप हो जाता है।

मुझे स्मरण है कि एक मनुष्य खिन्नता की बीमारी से बड़ी बुरी तरह पीड़ित था। जब एकाएक उसके सामने किसी आकस्मिक उद्वेग का आवरण आ जाता था, तब उसका चेहरा बिलकुल ही बदल जाता था। वह पहचाना ही न जा सकता था। घोर चिन्ता के चिन्ह उसके मुख पर दृष्टिगोचर होने लगते थे। ऐसे समय वह कोई काम नहीं कर सकता था—

उसके मित्र उससे हवा बचाने लगते थे। मानसिक बीमारी की घोर व्यथा उसके मुखमण्डल पर छाई रहती थी।

क्या यह कुछ कम हृदय-द्रावक बात है कि एक बलवान और शक्तिशाली मनुष्य, जो कि दुनिया में बड़े बड़े काम करने के लिये बनाया गया है—संसार में अद्भुत शक्ति का प्रकाश करने के लिये जिसका जन्म हुआ है-वह इस तरह की निराशा-मय और औदासिन्य-परिपूर्ण उस स्थिति का गुलाम बना रहे जो हमारे जीवन प्रकाश पर काला स्याह परदा डालती है। जो मनुष्य हज़ारों मनुष्यों का नेता बनने का सामर्थ्य रखता है—जो मनुष्य सैकड़ो मनुष्यों को किसी बड़े काम में लगा देने की शक्ति रखता है—जो मनुष्य दुनिया के महान् कार्य्य करने के लिये बनाया गया है, उस मनुष्य का इन मानसिक भूतों के पंजे में पड़ जाना, सचमुच कितनी खेद की बात है।

दुनिया में हमें ऐसे ऐसे मनुष्य दीख पड़ते हैं जिनकी महत्वाकांक्षा बहुत बड़ी हुई होने पर भी, जिनके हाथों से बहुत मामूली काम होते हैं। इसका कारण यही है कि वे खिन्न और निराश रहते हैं।

वह मनुष्य जो अपने मन का गुलाम बना हुआ रहता है, कभी नेता और प्रभावशाली पुरुष नहीं हो सकता। मैं एक बुद्धिमान मनुष्य को जानता हूँ, जिसके लिये मेरा विश्वास है कि यदि वह अपने मनोविकारों के बलि न पड़ा होता तो दुनिया में बड़े बड़े काम करता। उसका स्वभाव ही कुछ विचित्र ढंग का था। जब उसे अच्छी लहर आ जाती थी, तब तो वह बड़ा आशावादी बन जाता था और उन्नति की बातें करने लगता था। और जब आकस्मिक उद्विग्नता का आक्रमण उस पर हो जाता था, तब वह अपने को एकदम गिरा लेता

था—निराशा में डूब जाता था—अपनी सब आशाओं और आधारों को खो देता था।

अनुत्साह हमारी निर्णय शक्ति को मलिन करता है। भय के दबाव में आकर मनुष्य चाहे जैसा मूर्खता का काम करने लगता है। किस मार्ग पर जाना, क्या करना इस बात को बताने में जब बुद्धि जवाब दे दे—जब तुम बड़ी गड़बड़ी और भय में पड़े हो, तब कुछ देर ठहर कर अपने चित्त को शान्त करो—स्थिर हो जाओ और फिर विचार करो, तुम्हें रास्ता ज़रूर मिलेगा।

जब तक आप किसी बात का ठीक निर्णय नहीं कर सकते, जब तक कि आपके मन में भय, शङ्का और निराशा बनी हुई है, जब तक आपका मस्तिष्क भय और चिन्ता से परिपूर्ण है, तब तक किसी बात का निर्णय करने में मत लगिये। तुम अपनी राहों को तब ही सोचो जब तुम्हारा मस्तिष्क ठण्डा और शान्त हो। जब मन में डर रहता है, तब मानसिक शक्तियाँ बिखरी हुई रहती हैं और हम एकचित्त होकर किसी बात का ठीक निर्णय नहीं कर सकते।

बहुत से मनुष्य संसार में उन्नति नहीं कर सकते, इसका एक कारण यह भी है कि, वे महत्वपूर्ण बातों का तब विचार किया करते हैं, जब उनका मन भटकता हुआ रहता है और उसमें भय तथा शङ्का बनी रहती है।

उसी समय मनुष्य को अपने मन और मस्तिष्क को स्थिर और शान्त करने की विशेष आवश्यकता है, जब वह किसी आपद तथा गड़बडी मे पडा हो। ऐसी दशा में जब हमें मालूम हो कि हम पर भय और आपद अधिकार जमा रहे हैं, तब हम किसी महत्वपूर्ण बात का निर्णय ही न करें। तुम पहले अपनी दशा को सुधार लो। इसका अच्छा उपाय यह है कि उस गड़बड़ी

को अपने मन से निकाल कर स्थिर करो। अपने आप पर तुम अपना अधिकार कर लो—अपने मन को समतौल कर लो, तब तुम्हारा मस्तिष्क इस योग्य हो जायगा कि वह चाहे जिस बात का निर्णय ठीक तरह कर सकेगा। पर इस बात का सदा सर्वदा स्मरण रक्खो कि व्यथित और गड़बड में पड़े हुए मन से किसी महत्वपूर्ण बात का निर्णय मत करो।

परम पिता परमात्मा की यह इच्छा नहीं है कि हम मानव-गण अपने मनोविकारों के गुलाम बने रहें, पर उसकी यह इच्छा है कि—हम अपने मन को अपने तावे में रक्खें—जो चाहे सो विचार उसमें आने दें—हम उस पर शासन—राज्य—करें।

सुसंस्कृत मस्तिष्क के लिये यह बात बहुत सम्भव है कि वह उदासीनता—उद्विग्नता—के आक्रमण को एकदम रोक सके, पर खेद की बात है कि हम लोग आनन्द, उत्साह और आशारूपी सूर्य की किरणों को आने देने के लिये अपने मनोमन्दिर के द्वारों को खुले नहीं रखते। हम अपने मनोमन्दिर को केवल अन्धकार ही से पूर्णतया भर लेते हैं, इसीसे हमारी उदासीनता—उद्विग्नता—नष्ट नहीं होने पाती, संसार हमें अन्धकारमय दीखने लगता है।

मेरी राय में सब विद्याओं की शिरोमणि विद्या यह है कि हम अपने मन को साफ करना सीखें। मन को भद्दी वस्तुओं से हटा कर सुन्दर और सुमनोहर वस्तुओं की ओर जमाना—विरोध से हटा कर ऐक्य में उसे लगाना—मृत्यु के विचारों से हटा कर दिव्य जीवन के रहस्य में उसे लगाना—बीमारी के ख़यालों से हटा कर आरोग्य के मीठे विचारों में उसे सुख-स्नान कराना, यह एक बहुत बड़ी बात है। ऐसा करना कोई

सहज काम नहीं, पर मनुष्य के लिये यह सम्भव ज़रूर है। विचारों को ठीक ठीक रूप देने की इसके लिये बड़ी आवश्यकता है।

यदि तुम उन कुभावनाओं के लिये, जो तुम्हारी सुखशान्ति को लूटने वाली हैं, अपने मनोमन्दिर को बन्द किये रक्खोगे, तो धीरे धीरे यह हालत हो जायगी कि इनका रुख़ भी तुम्हारी ओर न हो सकेगा।

यदि हम चाहते हैं कि हमारे मनोमन्दिर से अन्धकार निकल जावे तो हमें चाहिये कि हम अपने मन को प्रकाश से प्रकाशित कर ले। यदि हम चाहते हैं कि हमारे मन से विरोध-भाव निकल जाय, तो हमें चाहिये कि हम अपने मन को ऐक्य के विचारों से भर लें। यदि हम चाहते हैं कि हमारे मन से असत्य निकल जाय, तो हमें चाहिये कि हम अपने मन को सत्य के विचारों से परिपूर्ण कर लें। यदि हम चाहते हैं कि हमारे मन से कुरूपता निकल जाय, तो हमें चाहिये कि हम अपने मन को सौन्दर्य्य के विचारों से परिपूर्ण कर ले। यदि हम चाहते हैं कि हमारे मन से अपूर्णता निकल जाय, तो हमें चाहिये कि हम अपने मन को पूर्णता के विचारों से भर ले। परस्पर विरुद्ध विचार एक साथ ही मन पर काबू नहीं चला सकते। इससे आप अपने हितैषी विचारों ही को अर्थात् ऐक्यता, सत्य और सौन्दर्य्य के विचारों ही को अपने मन में क्यों नही लाते?

हमें चाहिये कि अपने मन से अप्रीतिकर, अस्वास्थ्यकर और मृत्यु के विचारों को हटाने का मुहाविरा कर लें। मन को इन कुविचारों से बिलकुल साफ कर अपना कार्य आरम्भ करें। हमें चाहिये कि हम अपनी मनरूपी गेलरी से काम, क्रोध,

मान, माया, लोभ और द्वेष के विचारों को हटाकर शुद्ध, सात्विक, दया और सहानुभूतिपूर्ण विचारों को जगह दें।

अमेरिका के भूतपूर्व प्रेसिडेन्ट रूजवेल्ट एक बड़े ही प्रतिभाशाली और योग्य व्यक्ति समझे जाते है। संसार की सभ्यता पर प्रभाव डालने की उनमें शक्ति है। पर किसी काम को शुरू करने से पहले वे अपने विवेक से पूछ लेते हैं कि मैं अमुक कार्य करू या नही। "हां" का उत्तर मिलने पर ही वे अपने कार्य को शुरू करते है। क्योंकि वे इस बात को जानते है कि जिस काम को करने में, मन वचन, और विवेक ठीक तरह से स्वीकार कर लेते है, वह काम अच्छा होता है।

जब तुम्हें कभी ऐसा मालूम हो कि चिन्ताजनक विचार तुम पर अपना प्रभाव जमाना चाहते है, उदासी का तुम पर आक्रमण हुआ चाहता है, तब तुम स्थिर, शांत और तन्मय होकर अपने हृदयकेन्द्र से इस तरह के विचारों के उद्गार निकालो। अहा! मैं मनुष्य हूँ—मेरी आत्मा दिव्य है—निर्दोष है—अनन्त शक्तियां गुप्त रूप से उसमें विद्यमान है। वह सुख, शान्ति, आनन्द और पूर्णता का आगार है। भला, ऐसी दशा में वहां दुःख, चिन्ता, रोग, शोक का क्या काम! पर मुझे कमज़ोर देखकर ये मुझ पर अधिकार जमाना चाहते हैं, आज से मैं सँभल जाता हूँ। आज से मैं अपनी आत्मिक शक्तियों को प्रकाशित करने में यत्नवान होता हूँ। इससे हे मानव जाति के शत्रुओं? तुम मेरे मन से निकल जाओ, नही तो मै ज़बरदस्ती तुम्हें निकाल दूँगा। मेरी शक्ति के सामने अब तुम किसी तरह नही ठहर सकते, क्योंकि अब मैं सच्चा मनुष्य बनना चाहता हूँ। तुम्हारा ठौर ठिकाना निर्बल अज्ञानी ही के यहां लगेगा।

मैं देखता हूँ कि सच्चे मनुष्यों के सम्मुख तुम्हारी शक्ति बेकाम हो जाती है।

यदि नेपोलियन और ग्रेन्ट अपने मनोविकारों के वश में रहते तो क्या कभी वह सारे यूरोप को हिला सकते थे ? यदि लिंकन अपने मनोविकारों के वश में रहा होता तो क्या वह एक किसान के घर में जन्म लेकर इतनी तरक्की कर सकता था ? कभी नहीं।

हमारे कहने का मतलब यह है कि हमेशा अपनी आत्मा को सुख के—आनन्द के—संतोष के—मीठे समुद्र में हिलोरे लिवाते रहो। हमेशा मस्त रहो। दुःख, चिन्ता, और शोक को अपने मन से भुला दो। प्रकृति के सौन्दर्य्य को—ईश्वर की अपार लीला को देखकर आनन्दित होते जाओ। जहाँ देखो वहाँ सुख ही के स्वप्न देखो। विपत्ति में भी सुख ही को देखो, हमेशा खुश मिजाज़ रहो। उदासी, दुःख, चिन्ता पर विजय पाने का सहज और सरल उपाय यही है। आनन्द—अलौकिक आनन्द—स्वर्गीय आनन्द—दैवी आनन्द के दिव्य प्रवाह में तन्मय होते रहो—अपनी आत्मा को उसकी ओर अभिमुख करो। कभी मुँह चढ़ा हुआ मत रक्खो। हमेशा हास्य की मधुर रेखा से अपने मुख-मण्डल की दिव्यता बढ़ाते रहो। बस यही उदासीनता पर विजय पाने का राजमार्ग है।

दैवी तत्व से एकता

हार्वर्ड विश्वविद्यालय के भूतपूर्व अध्यापक प्रोफेसर शेलर महोदय ने कहा था कि वर्तमान शताब्दी का सब से बड़ा आविष्कार यह है कि विश्व के प्रत्येक पदार्थ में एकता है—अखिल जीवन में समानता है।

सब विश्व में एक ही तत्व काम कर रहा है—एक ही जीवन, एक ही सत्य वर्तमान है। हम सब उस दैवी प्रवाह की ओर जा रहे हैं, जो ईश्वर तक जाता है। इस तरह का विचार और मनोभाव रखने से हमें एक प्रकार का अलौकिक प्रोत्साहन प्राप्त होता है; हमारे मन का भय नाश हो जाता है।

जब हम विश्व के इस महा प्रभावशाली और जीवनप्रद दैवी तत्व का आत्मानुभव करने लगेंगे, तब हमारे जीवन में अलौकिक परिवर्तन होने लगेगा। वह एक नया रूप धारण करने लगेगा।

हम उसी परम तत्व के अंश हैं—हम उससे अलग नहीं हैं—जो गुण ईश्वर में हैं वे हमें भी बखूबी प्राप्त हो सकते हैं; क्योंकि हम उसी के तो अंश हैं, हम पूर्ण और अमर हो सकते हैं, क्योंकि पूर्ण परमात्मा से ही हमारी उत्पत्ति है, इत्यादि बातों का अनुभव करते रहने से हमारा जीवन एक प्रकार की अपूर्व अलौकिकता से परिपूर्ण हो जायगा। महान् आनन्द. महान् संतोष से वह भर जायगा।

इस बात को हमेशा मानते रहने से कि अनन्त जीवन से हमारी एकता है, मैं और परम पिता एक ही हूँ; हमें अपूर्व धैर्य, आश्वासन और निश्चय प्राप्त होता है। हमारा विश्वास हो जाता है कि हम आकस्मिकता और किस्मत के गुलाम नही है। हम उनको संचालन करनेवाले हैं—हम उनके स्वामी है।

जितना हम दैवी तत्व से एकता का सम्बन्ध जोड़ेगे—जितने हम अपने परम पिता परमात्मा में तन्मय होवेंगे, उतना ही हमारा जीवन शान्तिमय, आश्वासनपूर्ण और उत्पादक-शक्ति-युक्त होगा।

सेन्ट पाल महोदय कहते हैं "मेरा विश्वास है कि न मृत्यु, न जीवन, न स्वर्गीय दूत, न सिद्धान्त, न शक्ति, न वर्तमान पदार्थ, न भविष्य में उत्पन्न होनेवाले पदार्थ, न ऊँचाई, न गहराई, मतलब यह कोई भी पदार्थ हमें ईश्वरीय प्रेम से जुदा नहीं कर सकता।"

"तुम अपने आत्मा के सत्य को पहचानो, वह सत्य तुम्हे मुक्त कर देगा" सेन्ट पाल के उपरोक्त वचन का एक एक शब्द हमारी मनोमाला में ग्रथित करने योग्य है। सेन्ट पाल जैसा विश्वास रखने से हम भय, शङ्का, चिन्ता, डांवाडोलता के पंजे से अवश्य ही मुक्त हो जावेंगे।

जब मानव जाति को यह ज्ञान हो जायगा कि सर्व शक्तिमान् परमात्मा से उसकी एकता का सम्बन्ध है, तब उसके सब भय, सब शङ्काएँ नष्ट हो जायँगी।

जहाँ मन को दैवी तत्व की थोड़ी सी झलक दीख गई। जहाँ उसे यह मालूम होने लगा कि अनन्त से मेरी एकता है; फिर वह किसी चीज़ से न डरेगा, क्योंकि उसे इस बात का

विश्वास हो जायगा कि सर्व शक्तिमान् परमात्मा मेरे साथ है, फिर मुझे डर किस बात का है ?

जितने ही हम ईश्वर के परम तत्त्व के पास होंगे, उतने ही हम पदार्थों के अटूट भण्डार के पास होंगे। जब हमें अलौकिक परम शक्ति का अनुभव होने लगेगा, जब हमें उस शक्ति का ज्ञान हो जायगा जो हमारे हाड़माँस वाले शरीर के पीछे रही हुई है, जब हमें मालूम होने लगेगा कि ईश्वर के हम बहुत पास हैं तब हमारी शक्ति में अवश्य ही एक प्रकार की दिव्यता आ जायगी।

यदि हम शक्ति के आन्तरिक दैवी प्रवाह की ओर खुले तौर से अपने मनोमन्दिर के द्वारों को खोल दे, तो हमारे जीवन में कितनी अलौकिक शक्तियों का विकास होगा, इसका अनुमान भी इस वक्त लगाना कठिन है।

आज हम क्यों कमज़ोर और अकर्मण्य हो रहे हैं, इसका कारण यही है कि हम अपने कुविचार और असदाचरण के कारण आत्मा की इस अलौकिक शक्ति की ओर से अपने मनोमन्दिर के द्वारों को अपने हाथ से बन्द कर लेते हैं। जहाँ तक मनुष्य असदाचरण में प्रवृत्त है, वहाँ तक वह सच्ची शक्ति नहीं प्राप्त कर सकता।

जब जब मनुष्य कोई बुरा काम करता है, असदाचरण में प्रवृत्त होता है, तब तब वह अपनी शक्ति के बल को घटा लेता है। इस तरह बहुत से मनुष्य न्याय और प्रेम से नाता तोड़ कर ईश्वर से भी अपना नाता तोड लेते हैं। प्रत्येक कुकृत्य उस तार को तोड़ देता है, जो हमारे और ईश्वर के बीच में लगा हुआ है।

जब जब हम बुरा काम करते हैं, जब जब हम सत्य से विचलित होते हैं, जब हम कभी नीचता और बेईमानी का काम करते हैं, तब तब हम सर्वशक्तिमान् परमात्मा की दिव्य सत्ता से अपने आपको अलग कर लेते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि सब प्रकार के भय, शंकाएँ और सन्देह हम पर बुरी तरह अधिकार कर हमें अपना शिकार बना लेते हैं। ईश्वरीय सत्ता से अलग होने पर हमारी दशा उस निःसहाय बालक की सी हो जाया करती है, जो घोर अन्धकार में अकेला छोड़ दिया गया है और बिलखता हुआ इधर उधर बड़े दुःख से घूम रहा है।

मानव जाति अब इस बात को जानने लगी है कि उसकी शक्ति, उसकी विजय, उसका सुख उसी परिमाण में होगा जिस परिमाण में कि वह सकल शक्ति का सागर—अखिल सुखों का भण्डार-परमात्मा से अपना सम्बन्ध जोड़ेगा।

जितने दुःख, जितनी विपत्तियाँ हमें प्राप्त होती हैं, उसका कारण यही है कि अनन्त ऐश्वर्ययुक्त सर्वशक्तिमान् परमात्मा की ओर हम भिन्न भाव रखते हैं।

जिस समय हमें ऐसा मालूम होने लगता है कि सकल पदार्थों के उद्गम परमात्मा से हमारा सम्बन्ध टूट गया, उसी समय से भय और अनिश्चितता से हमारा मन व्याप्त हो जाता है। हमें ऐसा मालूम होने लगता है कि मानो हम निःसहाय हो गये हैं। हमें पद पद पर भय होने लगता है। कमज़ोरी हमारे शरीर के नस नस में फैल जाती है। भय, चिन्ता और खिन्नता इस बात के साक्षात् प्रमाण हैं कि सर्वशक्तिमान परमात्मा से हमारा नाता टूट गया—अनन्त जीवन से हमारा ऐक्य सम्बन्ध न रहा और मूल सिद्धान्त से हमारा विरोध हो गया।

अनन्त शक्ति परमात्मा से जितना हम अपना सम्बन्ध जोड़ेंगे, उतनी ही शक्ति हमें प्राप्त होगी क्योंकि शक्ति वही से आती है।

पूर्ण प्रेम भय का नाशक है क्योंकि पूर्ण प्रेम अनन्त जीवन परमात्मा और हमारे बीच के भिन्न भाव को नाश करता है।

जब हम आध्यात्मिक जीवन का अनुभव करने लगते हैं- जब हमें पूरी तौर से यह निश्चय होने लगता है कि ईश्वर से हमारा फिर सम्बन्ध जुड़ रहा है, तब हमारी सब विपत्तियाँ रफूचक्कर होने लगती हैं—हमारे पाप और बीमारियाँ शान्त होने लगती हैं।

जब हमारा ईश्वर के साथ इतना गहरा सम्बन्ध हो जाता है कि चहुँओर हमें वही वही दीखे, तब हमारी कमजोरी, संकीर्णता, भीरुता, संदेह आपोआप हममें से निकल जाते हैं और हमें पूर्ण निर्भयता और शक्ति प्राप्त होती है, जिसका उद्गम खास परमात्मा से है।

मनुष्य ईश्वर से जितना अपना सम्बन्ध जोड़ेगा, उतना ही वह अपनी आत्मा में जीवन, सत्य, सौन्दर्य के तत्वों का विकास करेगा। उसकी आत्मा नवशक्ति—नव धैर्य के सञ्चार से हरी भरी होकर खिल उठेगी।

मनुष्य उतना ही महान् होगा जितना वह अपनी आत्मा में सत्य, त्याग, दया, प्रेम और शक्ति का विकास करेगा; और इन सबके मूल परमात्मा से अपना सम्बन्ध जोड़ेगा। वह मनुष्य कभी महान् नहीं हो सकता। जो केवल अपनी वर्तमान शक्ति ही पर निर्भर रहता है और दैवी तत्त्व का ज्ञान नहीं करता।

मनुष्य अपनी ठीक ठीक शक्ति को वहाँ तक नहीं प्राप्त कर सकता, जब तक कि वह इस बात को मन, वचन और कार्य से न समझ ले कि विश्व के महान् तत्व का मैं अंश हूँ।

सत्य ही हम हैं। भूल हमारी आत्मा का स्वभाव नहीं, ऐक्य हमारी आत्मा का गुण है; प्रेम, न्याय, सत्य, सौन्दर्य के हम तत्त्व हैं; इस बात को हृदयपूर्वक मान लेने से हमें अपूर्व शान्ति का अनुभव होने लगता है; निर्मलता के हमें दर्शन होने लगते हैं, धैर्य हमें प्राप्त होता है। आत्मा आध्यात्मिक भवन पर बहुत ऊँची चढ़ जाती है।

जितने हम परम तत्त्व में पूर्ण तन्मय रहेंगे, उतना ही जीवन और स्वास्थ्य-प्रवाह हमें प्राप्त होगा, जिससे कि हमारी सब आधिव्याधि शान्त हो जायगी। यही अर्थात् ईश्वर के साथ ज्ञानपूर्वक सम्बन्ध जोड़ना ही सब प्रकार की चिकित्सा का—स्वास्थ्य का—सुख समृद्धि का—रहस्य है। ऐसा कोई स्थायी सुख संयोग नहीं, ऐसी कोई स्थायी तन्दुरुस्ती नहीं, ऐसा कोई सच्चा सुख नहीं जो अनन्त जीवन के बाहर हो। यदि हम ज्ञानपूर्वक अनन्त जीवन के दिव्य प्रवाह में अपने शारीरिक और मानसिक दिव्य सुख को ठीक तरह स्थिर रख सकें तो यही मानव जाति के कल्याण का परम रहस्य है।

इस तरह की आत्म-स्थिति हो जाने पर वृद्धता हम पर अधिकार न चला सकेगी। फिर हमें इस बात का अनुभव ही न होगा कि बुढ़ापा क्या चीज़ है, क्योंकि दिन प्रति दिन बूढ़े होने के बजाय हम में अधिकाधिक यौवन का दिव्य प्रवाह बहने लगेगा। दिन प्रति दिन हमारे शरीर में यौवन के जोशीले खून का प्रवाह ज्यादा जोर से बहने लगेगा। दिन प्रति दिन हम कल्याण मार्ग की ओर ज्यादा जोर से पैर उठाने लगेंगे।

बच्चों के पालन-पोषण की नई रीति

प्रेम की शिक्षा

थोड़े ही दिनों पूर्व न्यूयार्क में एक प्रदर्शनी हुई थी, जिसमें एक घोड़े ने बड़े ही अद्भुत काम कर दिखाए थे। उस घोड़े के अद्भुत कामों ने दर्शकों को एकदम ही आश्चर्य के समुद्र में डाल दिया था। उसके स्वामी का कथन है कि इसके कोई पांच ही वर्ष पहले इस घोड़े में बुरी आदतें पड़ी हुई थीं। वह बहुत ही भटकता था—लात मारता था और काटता भी था। अब उसने अपनी पूर्व आदतों को छोड दिया है। अब वह तुरंत हुक्म माननेवाला, नम्र हो गया है। अब वह पदार्थों की गिनती कर सकता है, बहुत से शब्दों का उच्चारण कर सकता है और उनके अर्थ भी बता सकता है।

सचमुच यह घोड़ा प्राय. हर चीज़ को सीखने योग्य मालूम पड़ता था। पाँच वर्ष के दयापूर्ण शिक्षक ने इसके स्वभाव को एकदम पलट दिया। अच्छे वर्ताव से घोड़ों जैसे जानवरों के स्वभाव पर भी बड़ा ही अद्भुत प्रभाव होता है। चाबुक मारने तथा धमकाने से उसका किसी प्रकार का सुधार नहीं हो सकता। उलटी इनके उसकी आदतें खराब होती हैं। इस घोड़े का पालक कहता है कि इन पाँच वर्षों में मैंने एक भी चाबुक उसके नहीं मारा था।

मैं एक स्त्री को जानता हूँ जो कई बच्चों की माता थी। वह कभी अपने बच्चों को मारती पीटती न थी। लोग उसे कहते थे कि तुम अपने बच्चों को बिगाड़ दोगी। तुम उनका सुधार न कर सकोगी क्योंकि प्यार से बच्चे बिगड़ जाते है। पर पीछे उन्ही लोगों को यह देखकर कि उन लड़कों के चरित्र ऊँचे हो गये हैं, अचम्भित होना पड़ा। उन लड़कों में मनुष्यत्व का सच्चा आदर्श देख कर उन्हें अपनी पूर्व भूल पर पश्चात्ताप करना पड़ा। उनके स्वभाव के अपूर्व विकास को देख कर उन्हें यह बात ठीक तरह जँचने लगी कि प्रेमपूर्ण वर्ताव ही से वास्तव में बच्चों का पालन पोषण किया जाना चाहिये।

प्रेम ही सब की अद्भुत चिकित्सा है—प्रेम ही जीवनप्रद है। प्रेम ही जीवन है, प्रेम ही हमारी व्यथाओं को शमन करने-वाला है-प्रेम ही जीवन को वास्तविक आनन्द का देनेवाला है।

अहा! हम लोगों को ये बातें कब सिखाई जायँगी कि आरोग्य का मूल तत्व प्रेम ही है। प्रेम ही आरोग्य के निदान—परमात्मा से हमारा मेल कराता है। जहाँ प्रेम का सुखद साम्राज्य है वहाँ काम, क्रोध, द्वेष, लोभादि दुर्गुण तो फटकने भी नहीं पाते। प्रेम ही शांति है। प्रेम ही सुख और आनंद है।

प्रेम ही सबसे बड़ा शिक्षक है—प्रेम ही सर्वोत्कृष्ट शान्ति कर्ता है। जो कुछ हमारे सुख पर वज्राघात करता है, प्रेम ही उसका नाशक है—प्रेम ही असन्तोष रूपी महान् व्याधि की रामबाण औषधि है। प्रेम ही द्वेष, मत्सर, ईर्षा आदि दुर्गुणों का उपशामक है। दया के सामने जैसे दुष्टता का नाश हो जाता है, वैसे ही प्रेम और उदार सहानुभूति के सामने बुरे मनोविकारों का नाश हो जाता है।

माता ही बच्चे के जीवन को सुसङ्गठित करती है और वही उसके भाग्य की विधात्री भी है। माता ही बच्चे को कान्ति में सूर्य के समान, विद्या बुद्धि में बृहस्पति के समान, दया धर्म में दयासागर ईश्वरचन्द्र विद्यासागर के समान, वीरता में महावीर नेपोलियन के समान बना सकती है। माता ही से बालक ससार का पाठ पढ़ते है। माता ही से बालक प्रेम, दया, सहानुभूति और निःस्वार्थता का सेवक सीखते हैं। विकलता से रोता हुआ बच्चा माता के ज़रा से पुचकारने मात्र से शान्त हो जाता है। माता का प्रेमपूर्ण शब्द बच्चे में प्रेम का अङ्कुर स्फुटित करता है।

हाय! उस बच्चे का भविष्य कितना शोचनीय, कितना गिरा हुआ होगा, जिसके कोमल मन में शुरू ही से बुरे बुरे विचार—भयपूर्ण कल्पनाएँ—दुष्ट विचार ठूँस दिये जाते हैं। उसके कोमल मन को पापपूर्ण कथाओं और अश्लीलता से मलीन कर दिया जाता है। पाठक! आप ही सोचिये कि ऐसी दशा में उसके भावी सुधार की कैसे आशा की जा सकती है। अवश्य ही उसका भविष्य महाभयङ्कर और अनिष्टकर होगा।

इसके विपरीत जो बालक पवित्रता, विशुद्धता और सुशिक्षा के वायुमण्डल में पाला-पोसा जाता है और जिसका कोमल मन सत्य, सौन्दर्य और प्रेम के उदार विचारों से भरा जाता है, उसके सुख और उन्नतिशील भविष्य की कल्पना कीजिये। इन दोनों बालकों के मिलान करने से क्या आपको यह मालूम न होगा कि जहाँ एक प्रकाश की ओर गति कर रहा है, वहाँ दूसरा अन्धकार की ओर।

जिस बालक का मन शुरू ही से द्वेष, मत्सर, ईर्षा और बदला लेने के कुविचारों से भर दिया जाता है, उस बालक के

लिये यह आशा करना दुराशा मात्र है कि भविष्य में वह उच्च जीवन व्यतीत करेगा।

इसके विपरीत जो बालक हमेशा सत्य, प्रेम, सौन्दर्य और उच्च चरित्र की बातें सुना और देखा करता है और इन्हींसे सम्बन्ध रखनेवाली बातें जिसे सिखाई जाती है, उसका भविष्य बड़ा ही प्रकाशमान होता है।

यदि हम अपने बच्चों का हित चाहते है उनका कल्याण चाहते हैं उनकी भावी उन्नति चाहते हैं, तो हमें चाहिये कि हम विजय के, सफलता के सुख के और उन्नति के प्रकाशमय विचार ही उनके सामने प्रकट किया करें। उनके कोमल मन को इसी तरह के आशामय और उत्साहपूर्ण विचारों से हरा भरा और प्रफुल्लित किया करे। ऐसा करने से हम उनके जीवन पर एक प्रकार का अलौकिक और अद्भुत प्रभाव डालते है। इस तरह के भावों से उनके मन को प्रभावित करने का परिमाण यह निकलेगा कि वे तब तक असफल और दुःखी न हो सकेंगे, जब तक कि वे उक्त प्रभाव से विपरीत आचरण न करने लगें। बच्चे के मन को हमेशा खुश रक्खो। सत्य से उसे भर दो जिससे किसी तरह की बुराई और भूल उसमें प्रवेश न कर सके।

बच्चों के सामने उनके ऐबों को—कमज़ोरियो को—प्रकट करते रहना बहुत ही बुरा है। बच्चो के कोमल मन पर इस तरह की हीनता और निर्बलतासूचक बातों का बहुत ही बुरा असर पड़ता है। बच्चों को उनके ऐबों और कमज़ोरियों की याद दिलाने के बजाय यदि उनका मन श्रेष्ठता, सौन्दर्य और सत्य के विचारों से भरा जावे तो मेरी राय में बड़ा ही ऊँचे दर्जे का लाभ हो। बच्चों के मन में प्रेम, सहानुभूति, पवित्रता

और उच्चता की प्रेरणाएँ करते रहने से थोड़े ही समय में बच्चों का मन एक अद्भुत प्रकार के दिव्य प्रकाश से प्रकाशित हो उठेगा। उसके मन की दशा कुछ ऐसी विचित्र हो जायगी कि बुरे तत्त्व फिर उसके पास फटकने तक न पावेंगे। अहा! फिर उसका मन दिव्य प्रकाश से सौन्दर्य से, दैवी प्रेम से इतना लबालब भर जायगा कि बुराई के तत्व उसके सामने आते ही नष्ट भ्रष्ट हो जावेंगे।

बच्चे के आत्म-विश्वास को हमेशा हरा भरा रखने की कोशिश करना चाहिये। हमेशा उसे प्रोत्साहित करते रहना चाहिये। उसको यह विश्वास करा देना चाहिये कि वह ईश्वर का पुत्र है, अतएव उसके अनन्त ऐश्वर्य, अनन्त ख़जाने का वह अधिकारी है।

बहुत से लड़के—खास कर वे जो कि स्वभावतः ही कोमल मन वाले है—डरपोक और शंकाशील है, यह वहम करने लगते है कि शायद हममें बुद्धि की न्यूनता है। ऐसे लडकों को अपनी योग्यता पर भी विश्वास नही रहता और वे बहुत जल्दी अनुत्साहित तथा निराश हो जाते है। अतएव बच्चे के आत्म-विश्वास को नष्ट करना—उसके मन पर निराशा का पड़दा फेकना—बड़ा ही भयंकर पाप है; क्योंकि आशाजनक शब्दों की तरह निराशाजनक शब्द भी बच्चे के कोमल मन पर अपना अधिकार जमा लेते है, जिसका कुफल बच्चों को आजन्म भोगना पड़ता है।

बड़े ही दुःख की बात है कि बहुत से माता-पिता इस बात को नही जानते कि बच्चे का मन कितना कोमल होता है और निराशा तथा उपहासजनक वचनों का उनके मन पर कितना बुरा प्रभाव होकर उनका सर्वनाश हो जाता है। बच्चों

को तो शाबासगी, प्रशसा और उत्साह ही की आवश्यकता है। इन्ही से उनका जीवन उन्नतिशील हो सकता है। यही उनके लिये पुष्टिकर औषधि का काम देते हैं। हमेशा उन्हें भला-बुरा कहते रहने से-दोष देते रहने से-उनके स्वभाव पर बुरा असर होता है। उनकी प्रकृति बिगड जाती है। मेरी समझ में बच्चों के सामने हमेशा उनके दोष निकालते रहना-हमेशा उन्हें धमकाते रहना, उन्हें यह दुर्वचन कहते रहना कि तुम नालायक हो, बुद्धिहीन हो, भाग्यहीन हो, संसार में कभी तुम तरक्की नही कर सकते—भारी दुष्टता है।

बच्चे को नित्यप्रति यह कह कर कि तू मूर्ख है-मन्दबुद्धि है—सुस्त है-बेकाम है-तू कोई काम नहीं कर सकता—तुझमें न बुद्धि है, न शारीरिक पराक्रम ही है। इससे तू कुछ नही कर सकता। इस तरह के पोच और सत्त्वहीन विचारों से माता-पिता सहज ही में बच्चे की निर्माण-शक्ति को कितनी नष्ट कर देते हैं-उसके उपज-शक्ति युक्त मन को कितना बेकाम कर देते हैं-उसके उत्साह को कितना मन्द कर देते है। हाय! दुर्भाग्य से यह बात ठीक तरह आज कल के माता पिता नही जानते।

मैं एक लड़के को जानता हूँ, जिसमें स्वाभाविक योग्यता अच्छी है, पर जो बड़े ही कोमल मन का और डरपोक है। यही कारण है कि उसकी उन्नति की गति बहुत धीमी है। उसके माता-पिता और शिक्षक ने यह कह कर कि वह मूर्ख और मन्द-बुद्धि है, उसके प्रकाशमान भविष्य को नष्ट भ्रष्ट कर दिया। यदि इस लड़के की ज़रा भी प्रशंसा और वाहवाही की जाती, इसे ज़रा भी उत्साह दिया जाता, तो भविष्य में यह बहुत बड़ा आदमी बनता, क्योंकि बड़ा आदमी बनने के लिये जिस सामग्री की दरकार होती है, वह उसमें भरी हुई थी। पर

अपने माता पिता तथा शिक्षक से ऐसे ही ऐसे पोच विचारों को निरन्तर सुनते रहने के कारण उसका यह विश्वास हो गया था कि मेरी बुद्धि उज्ज्वल नहीं—मेरी ज्यादा तरक्की हो नहीं सकती।

अब यह बात हम लोगों को मालूम होने लगी है कि उत्साह और प्रशंसा से बच्चा जैसा सुधरता है, वैसा धमकाने और मारने पीटने से नहीं सुधरता। उत्साह और शाबासी देने से बच्चा आश्चर्यजनक उन्नति करता हुआ मालूम होने लगता है। हर्ष की बात है कि कोई कोई माता पिता अब इस महान् हितकर तत्व को समझने लगे हैं, पर भारत के दुर्भाग्य से ऐसे माता-पिताओं की संख्या उँगली पर गिनने लायक भी नहीं है।

हम देखते हैं कि विद्यार्थीगण अपने उन शिक्षकों के लिये चाहे जो करने को तैयार हो जाते हैं, जो शिक्षक कृपालु, विचार-शील और खुशमिज़ाज होते हैं। ऐसे शिक्षक और विद्यार्थी के बीच का बर्ताव अच्छा रहता है। हमारी समझ में विद्यार्थी और अध्यापक के बीच मे किसी तरह की कुभावना न होनी चाहिये। होनी चाहिये केवल सद्भावना, जिससे कि अध्यापक को भी इस बात का यश मिल जावे कि इसने विद्यार्थियों के जीवन को ठीक सुधार दिया और विद्यार्थियों का भावी जीवन सुखमय बना दिया।

बहुत से माता-पिता अपने बच्चों के स्वेच्छाचार से बहुत तङ्ग आ जाते हैं, पर वे यह नही जानते कि यह बात शीघ्र मिटाई जा सकती है। जवानी के जोश में प्रायः ऐसा हो जाया करता है। उस समय उनमें जीवन और उत्साह-शक्ति भरपूर भरी हुई रहती है, जिससे वे शांत नही रह सकते। इधर दौड़ना, उधर कूदना आदि कई तरह के फरफंद ही वे किया

करते हैं। बिना हाथ पांव हिलाए उनसे बैठा नहीं जाता। पर हाँ, इस बात की माता पिता को विशेष सावधानी रखनी चाहिये कि इस तरह फरफन्द करते करते उनकी प्रवृत्ति कहीं दुष्कृत्यों में न चली जावे, मेरी समझ में माता-पिता प्रेमपूर्ण बर्ताव से उन्हें अपने वश मे ठीक तरह ला सकते हैं।

अपने बच्चों को आदर्श मनुष्य बनाने का प्रयत्न कीजिये, उन्हें पशु मत बनाइये। उन पर प्रेम कीजिये। अपने घर को अपनी पूरी शक्ति खर्च करके खूब आनन्दमय बनाइये और अपने बच्चो को वैसी स्वतन्त्रता दे दीजिये, जिससे किसी तरह की बुराई पैदा न हो और वे अपना मानसिक विकाश कर सके। आप खेल कूद में और आनन्द क्रिया में अपने बच्चों का उत्साह बढ़ाइये। उनके आनन्द में बाधक मत हूजिये। बहुत से माता पिता स्वास्थ्यकारी खेल खेलने से, आनन्द-क्रीड़ा करने से उन्हें रोक कर उनके बचपन के आनन्द को बहुत बुरी तरह नष्ट कर देते है—उनके आनन्दमय बचपन को बिगाड़ देते है।

बड़े दुःख की बात है कि हज़ारों माता-पिता अपने बच्चों के साथ बहुत ही सख्ती का बर्ताव करते हैं—उन्हें बुरी तरह धमकाते और भला बुरा कहते रहते हैं, इससे बेचारे वे कोमल हृदय बालक बहुत खिन्न और उदास रहा करते है। इसका परिणाम यह होता है कि उनका मानसिक विकास, खिलने से रुक जाता है, वे आजन्म सकुचाए हुए ही रह जाते है।

हर एक माता चाहे इस बात को जानती हो या न जानती हो, पर वह अपने बच्चों को अपनी आत्म-प्रेरणा के प्रभावों से प्रवाहित करती रहती है। बच्चों के पालन-पोषण में इस शक्ति का प्रभाव हुए बिना रह नही सकता। जब बच्चा किसी कारण से रोने लगता है तब वह बड़े प्यार से उसके

चुम्मा लेने लगती है और पुचकारती पुचकारती कहने लगती है "मेरे लड़के! चुप हो, तेरा दर्द अच्छा हो गया है" प्रेम-पूर्ण आश्वासन से बच्चा अपने दुःख को भूल जाता है—उसे भारी तसल्ली हो जाती है। माता जब प्रेम से अपने बच्चे पर हाथ फेरने लगती है, तब उसका असर बच्चे के हृदय तक पहुँच कर उसके सारे शरीर में आनन्द उत्पन्न कर देता है। हम देखते हैं कि बच्चे की छोटी मोटी तकलीफें तो केवल माता के प्रेमपूर्ण आश्वासन से और हाथ फेर कर उसे पुचकारने मात्र से दूर हो जाती है।

यह बात सही है कि प्रेरणाशक्ति के द्वारा बच्चों की उन शक्तियों का विकास किया जा सकता है; जिन पर कि स्वास्थ्य, सफलता और सुख निर्भर है। हममें से कुछ लोग इस बात को अवश्य ही जानते होंगे कि हमारे मानसिक भावों पर—हमारे धैर्य पर, हमारे आशा भरोसे पर, हमारी सम्पादन-शक्ति का बल निर्भर है। यदि बच्चे के कोमल मन में शुरू ही से आनन्दी और आशामय विचारों का प्रवाह चला जायगा, तो उनका भावी जीवन बड़ा ही आनन्दमय और आशापूर्ण हो जायगा। चिन्ता, अनुत्साह, भय को अपने पास न फटकने देंगे।

जिन लोगों का स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता, अवश्य ही उनके बचपन में स्वास्थ्यहीनता के विचार भरे होंगे। यह बड़े ही अफ़सोस की बात है कि बच्चों के मन में माता-पिता तथा अड़ोस पड़ोस के लोग अज्ञानता के कारण दुख दर्द आधि-व्याधि के विचार बड़ी बुरी तरह भर देते हैं। वे उन्हें कहते रहते हैं कि यह मनुष्य-शरीर तो दुःख दर्द आधिव्याधि का घर ही है। बस ये ख़याल बच्चों के दिल मे जड़ जमा लेते है और इनका कुफल आजन्म इन बेचारों को भुगतना पड़ता है।

बीमारी इसी कारण तब तक हाथ धोकर उनके पीछे पड़ी रहती है, जब तक कि मृत्यु उन्हें उठा न ले जाय।

बच्चा बीमारी की जितनी बातें सुनेगा, उतना ही बीमारी का डर उसे बना रहेगा। धीरे धीरे उसका यह विश्वास हो जायगा कि ईश्वर ने मेरे भाग्य में बीमारी ही बदी है—मैं इससे कभी छुटकारा नहीं पा सकता। बस इसी कुविश्वास के कारण उसे अपना जीवन निरानन्दमय और शून्य सा प्रतीत होने लगता है। अपने भाग्य को वह हमेशा कोसा करता है।

बस इन्ही बातों को ध्यान में रखते हुए हर माता-पिता को चाहिए कि बालक के कोमल मन में शुरू ही से सुस्वास्थ्य और शक्ति सम्पन्न विचारों को भरा करे। उन्हें यह बात समझा देवे कि स्वास्थ्य ही स्थायी पदार्थ है। बीमारी हमारी भूल का परिणाम मात्र है—हमारे बेमेल का नतीजा मात्र है। उसके मन में बिठा देना चाहिये कि सुस्वास्थ्य, समृद्धि, पूर्णता पर तेरा जन्म-सिद्ध अधिकार है। आधिव्याधि, दुःख, दरिद्रता, मानव-स्वभाव के अनुकूल नहीं। उसे ज्ञान करा देना चाहिये कि ईश्वर ने आधिव्याधि, दुःख-दरिद्रता पैदा नही की—उसकी यह मनशा नहीं कि हम बीमारी भोगें। सुस्वास्थ्य लाभ करने के लिये—सुख भोगने के लिये—आनन्द में मग्न रहने के लिये ईश्वर ने हमें बनाया है यह बात उन्हें समझा देना चाहिये।

बच्चे हर बात पर झट विश्वास कर लेते है। उनके माता-पिता बन्धुवर्ग और अड़ोस पड़ोस के लोग जो बातें कहते हैं, उन पर वे विश्वास कर लेते हैं। यहाँतक कि हँसी में भी उनसे जो बात कही जाय उसे मानने को भी वे तैय्यार हो जाते है।

इन बातों का अच्छा या बुरा प्रभाव उनकी आत्मा में जम जाता है जो उनके भावी जीवन में प्रकट होता है।

बच्चों को झूठा भय नहीं दिखाना चाहिये

बहुत से अज्ञानी और अविवेकी माता-पिता बच्चों को कई प्रकार के डर बता कर उन पर शासन जमाने की कोशिश करते हैं। "हौआ आया, वह तेरे कान काट लेगा" आदि बातें कह कर उन्हें डराते हैं; जिससे कि वे रोते हुए चुप हो जावें, तथा मस्ती करते हुए रुक जावें। पर इस प्रकार के माता-पिता इस बात को साफ़ भूल जाते हैं कि ऐसा करने से बच्चों का हम बड़ा अहित कर रहे हैं, और उन्हें भीरु तथा डरपोक बनाने का पाप अपने सिर ले रहे हैं। इस तरह की भयावनी बातों से बच्चों का सत्यानाश करना है। हम देखते हैं कि बहुत से माता पिता रात को बच्चा न रोवे इस खयाल से उन्हें अफ़ीम आदि विषैले पदार्थ दिया करते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि उनके मानसिक विकास पर बड़ा ज़बरदस्त धक्का पहुँचता है और वे मन्दबुद्धि हो जाते हैं। जो माता-पिता अपने लड़कों को बुद्धिमान और प्रतिभासम्पन्न बनाया चाहते हैं, उन्हें चाहिये कि वे अपने लड़कों को अफीम आदि मादक पदार्थ कभी न दिलाया करें।

यदि यह भी मान लिया जाय कि भय दिखाने बच्चों का विशेष नुकसान नहीं होता, तो भी उन्हें डराना बुरा ही है; क्योंकि उन्हें धोखा देना किसी तरह अच्छा नहीं कहा जा सकता। यदि मात-पिता के लिये कोई सब से अच्छी बात है, तो वह यह है कि वे अपने बच्चों के मन को आत्म विश्वस से भर दें। अपने बच्चों पर विश्वास करें। अनुभव से यह बात

जानी गई है, कि जिस बच्चे का एक दफा विश्वास हटा दिया जाता है फिर उसके मन में सहज ही में विश्वास जड़ नहीं जमा सकता। माता-पिता और बच्चे के बीच में कोई भेद न होना चाहिये। माता-पिता को चाहिये कि वे अपने बच्चो के प्रति साफ़ और खुले दिल से बर्ताव करें। वे इस बात की पूरी चिन्ता रक्खे कि कभी बच्चे के दिल को व्यर्थ ही न दुखावें।

जब बच्चा बड़ा होता है और वह देखता है कि जिन पर मैं पूरी तरह विश्वास करता था और जिन्हें मै ईश्वर-तुल्य समझता था वे वर्षों से हर तरह मुझे धोखा दे रहे है तब उसके दिल को कितनी चोट पहुँचती है—इसका खयाल भी कभी आपने किया है?

माता-पिताओ को यह बात हमेशा ध्यान में रखनी चाहिये कि हर प्रकार की क्लेशजनक वार्ता जो बच्चे के सामने कही जाती है—हर प्रकार का मिथ्या भय जो बच्चे के कोमल मन में भर दिया जाता है तथा जैसे भाव माता-पिता उसके प्रति रखते है और जैसा उसके प्रति बर्ताव करते हैं। ये सब बाते उसके मन में उसी तरह जम जाती है और उसके भावी जीवन में प्रगट होती हैं, जैसे फोनोग्राफ़ की चूडी में उतारा हुआ गाना जैसा का तैसा गायनरूप से प्रकट होता है।

जब लड़का भयभीत हो रहा हो, तब तुम उसे कभी मत मारो, न पीटो। जिस तरह व्यर्थ ही बहुत से माता-पिता अपने बच्चों को मारा पीटा करते है, उस तरह से मारना सचमुच उनके प्रति दुष्टता का बर्ताव करना है। ज़रा इस भयङ्करता को सोचिए तो सही कि इधर तो बच्चा मारे भय के चिल्ला रहा है और उधर पिता गुस्सा होकर चाबुक लिये हुए उसे

पीटने को तैयार खड़ा हुआ है। इसका बच्चे पर बहुत ही बुरा परिणाम होता है। बहुत से बच्चे माता-पिता तथा शिक्षक की इस दुष्टता को कभी नहीं भूलते और बदला लेने की फिक्र में रहते हैं।

बहुत से माता पिता बच्चे को उसके स्वभाव के विपरीत धन्धे में पटक कर उसके उन्नति-पथ पर बड़ी बुरी तरह काँटे बिछा देते हैं। वे उसे ऐसे विषय का अभ्यास करवाना चाहते हैं, जिसे करने का उसका दिल नहीं चाहता; जिसके लिये वह अपने आपको अयोग्य समझता है। जैसे बच्चे का दिल डाक्टरी के अध्ययन में लगता हो और उसे कानून का अभ्यास करने में मजबूर करना। इसका परिणाम यह होता है कि उस बच्चे का प्रकाशमान भविष्य अन्धकारमय हो जाता है और अपने स्वभाव-विपरीत विषय में वह अपनी प्रतिभा का विकास नहीं कर सकता। अतएव माता-पिताओं को चाहिये कि जिस विषय की ओर बच्चे का दिल जाता है उसी विषय को अध्ययन करने की उसे आज्ञा दें।

माता-पिताओं को यह बात ध्यान में रखना चाहिये कि बच्चों की स्वाभाविक गति में बाधा उपस्थित करना, मानो उनकी कार्य-संपादन-शक्ति को नष्ट करना है। ऐसे बहुत से मनुष्य देखे जाते हैं, जो बहुत से गुणों से युक्त हैं, पर किसी तरह की कमजोरी तथा कमी के कारण वे अपनी योग्यतानुसार कार्य नहीं कर सकते, और इसका कारण यही है कि बचपन में इनकी ये कमजोरियाँ और कमतरताएँ नहीं निकाली गई जो कि उस समय सहज साध्य थी। केवल योग्यता का होना काफ़ी नहीं, वरन् उस योग्यता को उपयोग करने की शक्ति का होना भी उसके साथ साथ आवश्यक है।

यदि बच्चों को निश्चयात्मक और उपजशक्ति को बढ़ाने की शिक्षा दी जावे तो मेरी समझ में यह उनके लिये बहुत मौलिक और महत्त्वपूर्ण होगी। बच्चों को सिखाना चाहिए कि वे अपने मन को सर्वोच्च उपज शक्ति की ओर कैसे लगा सकते है?

बच्चों को यह शिक्षा देना बहुत ज़रूरी है कि वे अपने जीवन में सुख, शान्ति और सफलता कैसे प्राप्त कर सकते है—वे कैसे उन्नति पर पहुँच सकते है? वे अपनी आत्मा की दिव्य-शक्तियों को किस तरह प्रकाशित कर सकते है?

आज कल के कालेजों की कुशिक्षा

देखा जाता है कि बहुत से विद्यार्थीगण अपने मग़ज़ को विद्या से भरपूर भर कर स्कूल तथा कॉलेज से निकलते हैं, पर उनमें आत्मिक योग्यता तथा आत्म-विश्वास कुछ भी नही होता। वे अब भी उसी तरह भीरु, शंकाशील, हतोत्साही रहते हैं, जैसे कॉलेज मे भर्ती होने के समय में थे।

अब आप ही कहिये कि लड़के को विद्या में धुरन्धर कर के ससार में भेजने से कैसे लाभ हो सकता है, जब कि उसमें यह शक्ति नहीं है कि वह अपने आत्म-विश्वास और निश्चय को ठीक ठीक काम में ला सके। उसमें तो वह कार्य-सम्पादन-शक्ति बल और उत्साह नहीं है, जो सफलता की कुंजी है।

मेरी राय में स्कूल तथा कॉलेज के लिये यह बड़े शर्म की बात है कि उसमें से ऐसे नवयुवक निकलें, जो छाती पर हाथ ठोक कर साहसपूर्वक इस बात को नही कह सकते कि हमारी आत्माएँ हमारी है और उनमें आत्म विश्वास और निश्चय की मात्रा कुछ भी नही है। हमारे कॉलेजों से प्रतिवर्ष ऐसे हज़ारों लड़के निकलते हैं कि जिनका शिक्षण अब भी वैसा ही रहता है,

जैसा कॉलेज मे भर्ती होने के पहले था। हम देखते है कि बहुत कॉलेज के ग्रेजूएट उस दफा खिसियाने लगते हैं, जब उन्हें पब्लिक में व्याख्यान देने के लिये कहा जाता है। मनुष्यों की मण्डली में उठकर बोलना उनके लिये कठिन हो जाता है। दो सौ चार सौ मनुष्यों की मण्डली में वे किसी प्रस्ताव को नहीं पढ़ सकते, पढना तो दूर रहा उसका अनुमोदन भी नहीं कर सकते।

वह समय शीघ्र ही आनेवाला है—वह प्रभात शीघ्र ही उगनेवाली है, जब कि ऐसी शिक्षाओं से नवयुवक विभूषित किये जावेंगे जिससे कि वे अपनी योग्यता का बखूबी उपयोग कर सकें और अपने ज्ञान का हर समय उपयोग कर सकें और सर्व साधारण में बिना किसी हिचकिचाहट के अपने मन्तव्यों को साहसपूर्वक प्रकाशित कर सके। आत्म-संयम और आत्म-विश्वास का उन्हें पाठ पढ़ाया जायगा। भविष्य में जो शिक्षा दी जावेगी, उसका सार यही होगा कि जो कुछ विद्यार्थी जानता है, उसका वह जब चाहे तब प्रकाश कर सके—अपनी विद्या का इच्छानुसार उपयोग कर सके।

हम देखते हैं बहुत से विश्वविद्यालय के उपाधिधारी ग्रेजूएट बहुत से विषयों में वैसे ही कमज़ोर और गतिहीन निकलते हैं, जैसे वे कॉलेज में प्रवेश करने के समय थे। वह शिक्षा किस काम की जिसमें लड़कों को अपनी शक्तियों का—अपनी परिस्थिति का स्वामी होना न सिखाया जावे, जिसमें लडकों को यह न बताया जावे कि अपनी विद्याबुद्धि का काम पड़ने पर फ़ौरन उपयोग कैसे किया जा सका है।

कॉलेज का वह ग्रेजूएट जो डरपोक है, शंकाशील है—जो पब्लिक में या दूसरे किसी स्थान में काम पड़ने पर अपनी विद्याबुद्धि का प्रकाश नहीं कर सकता, कभी महत्व प्राप्त

नहीं कर सकता, कभी समाज में उसका वज़न पैदा नहीं हो सकता। काम पड़ने पर जिस ज्ञान का उपयोग न हो सके, वह ज्ञान किस काम का ?

वह समय आ रहा है जब कि हर बच्चे को अपने आप में विश्वास करना—अपनी योग्यता पर भरोसा रखना सिखाया जायगा। मेरी समझ में यह बात उसकी शिक्षा का प्रधान अङ्ग होगा क्योंकि जब वह अपने आपमें पूर्ण विश्वास करने लगेगा तब वह किसी प्रकार की कमज़ोरी को पास फटकने न देगा।

बच्चे के मन में इस दिव्य विचार को जमा देना चाहिये कि दयासागर परमात्मा ने उसे संसार में किसी खास उद्देश्य की पूर्ति के लिये भेजा है और उसके हाथ से ज़रूर उस उद्देश की पूर्ति होगी।

हर नवयुवक को सिखाना चाहिये कि संसार में वह उस महान् पद पर आसीन होगा जिस पर संसार के महान् पुरुष हुए हैं। उसे सिखाना चाहिये कि वह ईश्वर का अंश है; सब दैवी शक्तियाँ उसमें भरी हुई हैं; अतएव यह कभी किसी भी दशा में असफल नहीं हो सकता। उसे सिखाना चाहिये कि तुम्हारी आत्मा में वह दिव्यता मौजूद है जो संसार को अलौकिक प्रकार से प्रकाशमान कर सकती है। उसे सिखाना चाहिये कि संसार में वह अपने आप को महत्वपूर्ण समझे। इस तरह की शिक्षा देने से मैं निश्चय-पूर्वक कहता हूँ कि उसका आत्म-सम्मान बढ़ेगा—उसका मानसिक और शारीरिक विकास होगा और उसका जीवन दिव्यता से परिपूर्ण होकर सुख-पूर्ण, तथा शान्ति-पूर्ण सफलता का अनुभव करेगा।

दीर्घायु

अमेरिका के संयुक्तप्रान्त का एक परम वैभवशाली धनिक कहा करता कि यदि कोई मेरी उम्र को दस वर्ष अधिक बढ़ा दे तो मैं उसे एक करोड रुपये दूँ। मैं कहता हूँ कि एक करोड़ ही क्या पर वह इसके लिये एक अर्ब रुपये तक देने को तैयार हो सकता है।

अहा! हम सबको अपना जीवन कितना प्यारा, कितना मूल्यवान मालूम होता है। जीवन एक ऐसी वस्तु है कि दुखी से दुखी मनुष्य भी इसे छोड़ना नहीं चाहता। आजन्म निर्वासन की सजा पाया हुआ मनुष्य भी यह नहीं चाहता कि अभी ही मैं अपनी जीवन-लीला समाप्त कर दूँ।

हमारी महत्वाकांक्षा चाहे जो हो, पर हम सबको जैसा जीवन प्यारा है, वैसा कोई पदार्थ नहीं। हमारा हमेशा यही लक्ष्य बना रहता है कि हमारा जीवन पूर्ण सुखी, पूर्ण आनन्द-मय हो। हर मामूली आदमी बुढ़ापे की ओर गिरती हुई अवस्था के चिन्ह देखकर भयभीत होता है। पर आदमी यही चाहता है कि मैं हमेशा मोटा ताज़ा और जवान बना रहा रहूँ। पर दुःख इस बात का है कि अपने स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिये जैसी सावधानी रखना चाहिये वैसी वे नहीं रखते। वे स्वास्थ्य के दीर्घायु होने के नियमों का यथोचित रीति से पालन नहीं करते। अप्राकृतिक रहन सहन से और बुरी आदतों से वे अपनी शक्ति को खोते जाते हैं और लगे हाथ ही इस बात का आश्चर्य्य करने लगते हैं कि हमारी शक्तियाँ क्यों क्षीण

हुई जा रही हैं। हम अपनी शक्तियों को इस तरह दूषित और क्षीण कर अपने आप अपने पैरों में कुल्हाडी मारते हैं। जहाँ हम दीर्घ-जीवन देखें, वहाँ हमें समझ लेना चाहिये कि जरूर यह जीवन आत्म-संयमपूर्वक विताया जा रहा है।

जैसा कि हमारा पैसा कमाने की ओर ध्यान रहता है वैसा ध्यान यदि हम अपने यौवन और बल को बनाए रखने में रखें तो हमारा यौवन और बल दिन ब दिन क्षीण होने के बजाय दिन दूना रात चौगुना हरा भरा और प्रफुल्लित रहा करेगा।

मनुष्य की दशा उस उमदा घड़ी जैसी है, जो यदि ठीक रीति से रक्खी जावे तो सौ वर्ष तक काम दे सकती है और यदि लापरवाही से रखी जावे तो बहुत जल्द खोटी हो जाती है

यह देख कर सचमुच बड़ा आश्चर्य होता है कि हम सब लोग जीवन पर इतना प्रेम करते हैं, उससे गहरे चिपके हुए रहते हैं, पर हम उसे बुरी रहन सहन और बुरे आचार विचार के कारण बहुत बुरी तरह नष्ट करते जाते हैं। हमारे जीवन के बहुत से अमूल्य दिन इसी तरह नष्ट हुए जा रहे हैं।

जब तक हम बुढ़ापे ही के ख़याल में गर्क रहेंगे, बुढ़ापे ही की कल्पनाओं में गोते लगाते रहेंगे—बुढ़ापे ही के स्वप्न देखते रहेंगे, तब तक हम बूढ़े ही होते जावेंगे। हमारे विचार, हमारी कल्पनाएँ, हमारी प्रकृति और अभिलाषाओं के विरुद्ध ठीक वैसे ही काम करने लगेंगे जैसे असफलता का भय और संशय हमारे धन कमाने के प्रयत्न के विरुद्ध काम करने लगते हैं।

हमारा मानसिक आदर्श इस बात को बता देता है कि म े जीवन में यौवन की इमारत बन रही है या बुढ़ापे की हर मनुष्य में ऐसी एक स्वाभाविक शक्ति भरी हुई है, जिस्म

कि वह जीवन को बढ़ा सके—अपनी आयु को दीर्घ कर सके, पर इसके लिये आवश्यक है कि पहले वह मानसिक तत्व को भली भाँति समझ ले।

जो मनुष्य यह कहा करता है कि अब हमारे गिरते हुए दिन हैं—अब हमारा शरीर दिन २ क्षीण ही होगा—बुढ़ापे के कारण हमारा बल घटेगा, उसके लिये पूर्ण स्वास्थ्य, हृष्टपुष्टता प्राप्त करना एकदम असम्भव है।

मन ही अपने लिये जीवन का रास्ता बनाता है और मृत्यु का रास्ता भी मन ही तयार करता है। विचार उस रास्ते की सीमा को निश्चित कर देते हैं।

बहुत से मनुष्य इस बात को नहीं जानते कि हमारे मानसिक भाव ही में वह कार्योत्पादक शक्ति है, जो हमेशा कार्योत्पादक फलों को उत्पन्न करती है। जब जब हम अपने मन को सुसङ्गठित करते हैं, हम उससे कुछ कार्योत्पादक पदार्थ पा ही लेते हैं। यदि हम अपने मन को सौन्दर्य के विचारों से सुसङ्गठित करें, तो उसका फल सौन्दर्य ही निकलेगा। यदि हम अपने मन को गिरती हुई शक्तियों की बुरी दशा में ला रखें तो इसका फल भी हम सड़ा हुआ पावेंगे। प्रत्येक मानसिक भाव जो कि यौवन के मूल से विपरीत है, वह बुढापे ही को उत्पन्न करेगा।

यदि हम हमेशा अपने मन में यौवन के दिव्य प्रवाह को बहाते रहें—यदि हम हमेशा यौवन के आदर्श को सामने रख कर उसकी प्राप्ति के लिये क्रिया करें तो बुढ़ापा हमसे अवश्य ही दूर रहा करेगा।

प्रेन्टिस मलफोर्ड नामक लेखक कहता है कि यदि तुम तीस पैंतीस वर्ष ही की उम्र में बुढ़ापे के स्वप्न देखने लगे, तो

पचास तथा पचपन वर्ष की उम्र में तुम पूर्ण वृद्ध हो जावोगे। तुम्हारे शरीर में झुर्रियाँ पड़ जायँगी। शरीर की कार्य-कारिणी शक्ति चली जायगी। इसका कारण यह है कि तुम्हारे बुढ़ापे के विचार तुम्हारे यौवन को निकाल कर उसका स्थान बुढ़ापे को दे देंगे। यदि तुम यह देखते रहोगे कि हमारा शरीर क्षीण हुआ जा रहा है, तो वह अधिकाधिक क्षीण होगा। वे मनुष्य जो अपने मन को यौवन के विचारों से हरा भरा रखते है, उनके शरीर पर यौवन साफ झलकने लगता है। बहुत से मनुष्य साठ ही वर्ष की उम्र की अवस्था में बूढ़े दीखने लग जाते हैं, इसका कारण यही है कि उनका शुरू ही से यह विचार रहा है कि साठ वर्ष की अवस्था बुढ़ापा है।

मानव समाज के मन में यह एक भारी भ्रम जम रहा है कि पचास, पचपन वर्ष की उम्र के बाद मनुष्य की ढलती दशा का आरम्भ हो जाती है। इस उम्र के बाद उसकी शारीरिक और मानसिक शक्तियाँ नष्ट होने लगती हैं। बड़े ही शोक का विषय है कि मनुष्य जो ईश्वर का सर्वश्रेष्ठ और सर्वोत्कृष्ट पुत्र है, उसकी ढलती हुई अवस्था का प्रारम्भ पचास वर्ष ही की उम्र में हो जावे। ऐसी उम्र के बाद तो उसके शरीर और मन की शक्ति बढ़ना चाहिये।

मनुष्य की बनावट की ओर खयाल किया जावे तो मालूम होता है कि उसके पूर्ण खिलने का—उसकी कार्य्यसम्पादन शक्ति के पूर्ण प्रकाश का, उसकी आन्तरिक दिव्यज्योति के चमकने का समय तीस वर्ष से शुरू होता है। क्या कभी दयासागर परमात्मा की यह मर्जी हो सकती है कि हम लोग पचास साठ वर्ष की उम्र में ढलती अवस्था पर पहुँच जावें, जब कि हमारे पूर्ण यौवन का आरम्भ ही तीस वर्ष से शुरू

होता है। आप प्राणि संसार की ओर दृष्टि डालिए, तथा वनस्पति संसार की ओर नज़र फेंकिये तो आपको मालूम होगा कि किसी जानवर को यौवन प्राप्त करने में जितना समय लगता है, उससे वह चौगुना जीता है। वनस्पति का भी यही हाल है। उसको पूरी तरह फलने फूलने को जितना समय लगता है उससे तिगुने समय वह नहीं मुर्झाती। जब जानवरों और वनस्पति का यह हाल है तो मनुष्य के लिए यह असम्भव है कि उसके पूर्ण यौवन खिलने को जितना समय लगे उससे वह चौगुना न जी सके! अवश्य ही हम लोग अपनी शक्ति और बल को कम से कम उस समय तक बराबर रख सकते हैं, जब तक कि हमारी उम्र अस्सी के उस पार न चली जावे।

सर हरमन वेबर नाम के सुप्रसिद्ध अंग्रेज डॉक्टर कहते हैं कि मनुष्य मज़े से सौ वर्ष जीता रह सकता है।

कवि स्टेडमन का कथन है "मनुष्य सत्तर वर्ष की उम्र हो को क्यों बुड्ढा समझते हैं? वह यदि स्वास्थ्य और बल को बनाए रखें तो क्या पाँच सौ वर्ष तक नहीं जी सकते? क्या आप यह नहीं चाहते कि पचास वर्ष तक हम सुखपूर्वक प्रवास करते रहें, पचास वर्ष तक नये नये अविष्कारों की आविष्कृत करते रहें; पचास वर्ष तक किसी राजनीतिज्ञ के पद पर काम करें, पचास वर्ष तक डाक्टरी का काम करें; पचास वर्ष तक नये नये ग्रन्थ लिखें और शेष में दुनिया के दूसरे २ काम करें।

मनुष्य तब तक बूढ़ा नहीं होता जब तक कि उसके जीवन में मधुरता और उत्साह बना रहता है, जब तक कि उसके हृदय में महत्वाकांक्षा बनी रहती है—जब तब कि उसके खून में कार्य-कर शक्ति का प्रवाह बहता रहता है।

मनुष्य की उम्र चाहे कम ही क्यों न हो, पर यदि यौवन के विचार उसके मन से निकल गये हैं—उसका उत्साह ढीला पड़ गया है—उसका कार्य-कर बल कमजोर हो गया है, तो उसे बूढा ही समझना चाहिये।

इस कल्पना से कि अमुक उम्र के बाद मनुष्य की ढलती अवस्था का आरम्भ हो जाती है-उसकी इच्छाएँ मन्द होने लगती हैं—इसने मानव समाज का बड़ा नाश किया है।

हम अपने आपको बूढ़े समझने लगते हैं। हमारे विचार भी ऐसे हो जाते हैं। इसका फल यह होता है कि बुढापा हमें जल्दी २ घेरने लगता है। तब तक हम बूढ़े ही होते जावेंगे जब तक कि हम अपने बुढापे के विचारों को यौवन के-स्वास्थ्य के-हृष्ट-पुष्टता के—उत्साह के-विचारों में न परिणित कर दें।

"हम एक दिन अवश्य ही बूढ़े होंगे" इस कल्पना ने मानव समाज के मन में बुरी तरह जड़ जमा ली है। यही कारण है कि बहुत से मनुष्यों के मुख तथा शरीर पर शीघ्र ही बुढ़ापे के चिन्ह दीखने लगते हैं।

जब हम यह विश्वास करने लगेगें कि जीवन का मुख्य तत्व ईश्वरीय तत्व से प्रकट हुआ है, अतएव उस तत्व पर समय का प्रभाव नहीं चलता, बुढ़ापे की छाया नहीं पड़ सकती, तब ही हम ढलती उम्र में भी अपने यौवन को कायम रख सकेंगे। जब हम इस शाश्वत यौवन तत्त्व पर कायम रहने लगेगें, जब हम छाती पर हाथ ठोक कर साहसपूर्वक इस बात को कहने लगेंगे कि हमारी आत्मा का सत्य स्वरूप, हमारी आत्मा का दैवीतत्व, ऐसा अलौकिक है कि वहाँ बुढ़ापा जगह नहीं पा सकता, जरा अपना अधिकार नहीं चला सकती, तो इस तरह के सुविचारों का प्रभाव हमारे शरीर पर दीखने

लगता है। अर्थात् हमारे शरीर पर पूर्ण सौन्दर्य और यौवन के सब चिह्न दिखाई देने लगते हैं।

जैसे हमारे विचार होते हैं, वैसी ही हमारी शारीरिक स्थिति होती है। हम चाहें कि हमारी शारीरिक स्थिति हमारे विपरीत हो तो यह बात सर्वथा असम्भव है। क्या कोई डाक्टर उस रोगी को बचा सकता है, जिसका यह विश्वास हो गया है कि मैं मर जाऊँगा, कोई मुझे नहीं बचा सकता?

मैं ऐसे कई लोगों को जानता हूँ कि जिनका यह विश्वास हो गया था कि साठ या पैंसठ वर्ष की उम्र से ज़्यादा नहीं जी सकते। इस विश्वास ने उनके मन में ऐसी पक्की जड़ जमा ली थी कि सचमुच वे उसी उम्र में संसार से चल बसे।

इन पंक्तियों का अनुवादक एक ऐसे मनुष्य को जानता है जिसकी जन्मपत्री में लिखा हुआ था कि वह अमुक मिती को मर जायगा। उस मनुष्य का फलित ज्योतिष पर पूरा विश्वास था। उसे पूरा भरोसा हो गया था कि इस मिति के आगे मैं किसी तरह जी नहीं सकता, विधाता ने इतनी ही उम्र मेरे लिये लिखी है। उक्त मिती के दो तीन दिन पूर्व से वह अपनी मृत्यु की तैयारी करने लगा। उसकी सब मनोवृत्तियाँ मृत्यु की ओर खिंच गईं। आश्चर्य इस बात का है कि वह अभागा उसी दिन मर भी गया। पाठकगण! क्या आप इसका कारण समझे? उसके मृत्यु सम्बन्धी विचारों ही ने उसका घात किया—उसके इस दुर्विश्वास ही मृत्यु-मुख में उसे ढकेला। उस नीच और नराधम ज्योतिषी ने उसकी जन्मपत्री में यह लिख कर कि वह अमुक दिन मर जायगा, उसकी मृत्यु होने में बड़ी सहायता दी।

मनन करने योग्य सद्विचार

"उत्तमोत्तम ग्रंथों का पढ़ना और उन पर मनन करने का सौ ·
जिसे प्राप्त है उसके सामने चंचल लक्ष्मी का विनोद किस गिनती में है।'

"उत्तम पुस्तकें ही सच्चे मित्र हैं। अपनी चिन्ताओं को दूर करते हैं। क्रोध आदि बुरी वृत्तियों को वश में रखने मे निराशाओं को नाश कर उत्साहपूर्वक आनन्दमय जीवन व्यतीत करने में वे मदद देती हैं।"

"विश्व का ज्ञान पुस्तकों में है। जिस घर में सद्‌ग्रथों का पठन मनन नहीं होता वहाँ हमेशा अशान्ति, आलस्य, विलासिता, अनीति आदि दुर्गुणों का राज्य रहता है अतएव सद्‌ग्रन्थों का संग्रह कीजिये।"

"ज्ञान के समान संसार में कोई पवित्र वस्तु नहीं है"—श्रीकृष्ण

जीवन में साहित्य का स्थान

भिन्न भिन्न समय और भिन्न भिन्न देश और समाज के विचारों के भण्डार का नाम साहित्य है। संसार में जो नाना प्रकार के मनुष्य—कोई परोपकारी, कोई स्वार्थी, कोई सदाचारी कोई दुराचारी, आदि दिखाई पड़ते हैं उनका वैसा होने का मूल कारण उनके विचार ही हैं। जो अपने हृदय में जैसे विचारों को स्थान देता है वह वैसा ही बन जाता है। विचारों को उत्तम बनाने का यदि कोई साधन है तो वह सत्संग या साहित्य ही है, परन्तु सत्संग को प्राप्त करना जितना दुःसाध्य है उतना पुस्तकों का सग्रह कर पठन और मनन करना नहीं है। और पुस्तकें खुद भी तो एक प्रकार का सत्सग ही है क्योंकि उनमें भूत और वर्तमान काल के अनेक महापुरुषों के सारे जीवन के अनुभवों और उपदेशों का सार है।

योरप, अमेरिका, जापान आदि देशो में राजा से लेकर भंगी तक, लक्षपति से लेकर गरीब मजदूर तक पढ़ने लिखने और अपने ज्ञान बढ़ाने की कोशिश करते हैं। वहाँ घर घर में आपको उत्तम पुस्तकों का संग्रह मिलेगा। यही कारण है कि वे देश इतने उन्नत हैं। हमारी अवनत अवस्था के विशेष कर हम ही कारण हैं। हमने अपने गोरे (युरोपीय) भाइयों के इस गुण को ग्रहण नहीं किया।